मई 2001 मूल्य : सात रुपये

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास को समर्पित

जल संकट : सम्पूर्ण विश्व के सामने एक कठिन चुनौती

ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के कार्यान्वयन में लोगों की भागीदारी बढ़ाने के ग्रामीण विकास मंत्रालय के प्रयास

अप्रैल 2001 के प्रथम सप्ताह में ग्रामीण विकास मंत्री श्री एम. वेंकैया नायडू ने एक संवाददाता सम्मेलन में अपने मंत्रालय की पिछले वित्त वर्ष की उपलब्धियों और इस वर्ष के लक्ष्यों की चर्चा की। उन्होंने बताया कि वित्त वर्ष 2000–2001 में मंत्रालय ने बजट में उपलब्ध कराई गई विशाल धनराशि का पूरा उपयोग किया। केवल पूर्वोत्तर राज्यों की सरकारों द्वारा अपने हिस्से की धनराशि उपलब्ध न कराए जा सकने के कारण कुछ कमी रही। मंत्रालय द्वारा जारी प्रेस नोट में बताया गया है कि वर्ष 2001–02 के लिए ग्रामीण विकास मंत्रालय ने 9,765 करोड़ रुपये की राशि आबंटित की है और यह राशि प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना के 2,500 करोड़ रुपये और पेय जल तथा आवास के लिए प्रधान मंत्री ग्रामोदय योजना के 750 करोड़ रुपये के अतिरिक्त है।

ग्रामीण विकास मंत्री श्री एम. वेंकैया नायडू देश भर का सघन दौरा करते रहे हैं ताकि कार्यक्रम के कार्यान्वयन की प्रत्यक्ष जानकारी प्राप्त की जा सके। अब तक उन्होंने 19 राज्यों का दौरा किया है। मंत्री महोदय ने सभी संबंधित व्यक्तियों से व्यापक विचार–विमर्श किया है जिनमें मुख्यमंत्रियों से लेकर आम जनता और प्रेस से जुड़े लोग शामिल हैं। ग्रामीण विकास राज्य मंत्री भी विभिन्न राज्यों का दौरा करते रहे हैं।

प्राप्त अनुभवों के आधार पर मंत्रालय योजनाओं के बारे में जागरूकता, पारदर्शिता, जनता की भागीदारी और सामाजिक लेखा परीक्षा तथा जवाबदेही जैसी चौतरफा नीति पर बल देगा। जागरूकता बढ़ाने के लिए प्रिंट, श्रव्य, दृश्य–श्रव्य के साथ–साथ दूसरे संचार माध्यमों का उपयोग कर एक मल्टी मीडिया अभियान शुरू किया जाएगा।

आकाशवाणी और दूरदर्शन ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के बारे में जानकारी देने के साथ–साथ सफलता की कहानियों को भी प्रसारित करेंगे। कार्यों की प्रगति की वास्तविक जानकारी हासिल करने के लिए मीडिया कार्यशालाओं का आयोजन करने और प्रेस से जुड़े लोगों के दौरे का भी प्रस्ताव है।

ग्रामीण विकास कार्यक्रमों को बनाने और कार्यान्वित करने में मंत्रालय

(शेष तृतीय आवरण पृष्ठ पर)

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय
की
प्रमुख मासिक पत्रिका

वर्ष 46 अंक 7
बैशाख–ज्येष्ठ 1923
मई 2001

संपादक
बलदेव सिंह मदान

सह–संपादक
रवि सपरा

उप संपादक
जयसिंह

संपादकीय पता
संपादक, 'कुरुक्षेत्र',
ग्रामीण विकास मंत्रालय,
कृषि भवन, नई दिल्ली–110001
दूरभाष : 3015014
फैक्स : 011–3015014
तार : ग्राम विकास

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)
डी.एन. गांधी

विज्ञापन प्रबंधक
पी.सी. आहूजा

आवरण सज्जा
अलका नय्यर

फोटो साभार :
मीडिया डिवीजन, ग्रामीण विकास मंत्रालय

मूल्य एक प्रति : सात रुपये
वार्षिक शुल्क : 70 रुपये
द्विवार्षिक : 135 रुपये
त्रिवार्षिक : 190 रुपये

विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)
पड़ोसी देशों में : 500 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में : 700 रुपये (वार्षिक)

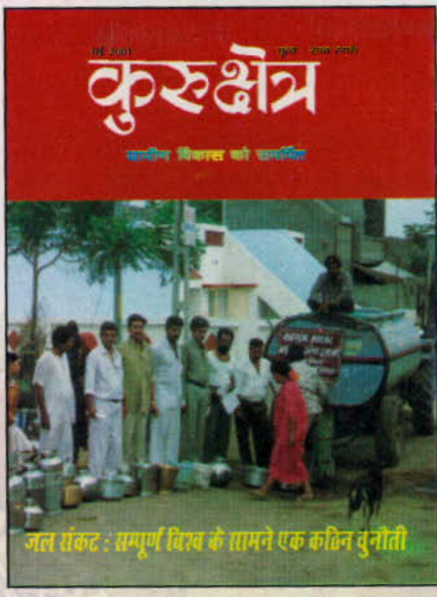

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, ईस्ट ब्लाक–4, लेवल–7, आर.के. पुरम, नई दिल्ली–110 066 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए विज्ञापन प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, ईस्ट ब्लाक–4, लेवल–7, आर.के. पुरम, नई दिल्ली–110 066 से संपर्क करें। फोन : 6105590

हिन्दी के अतिरिक्त अंग्रेजी में भी प्रकाशित होने वाली इस पत्रिका में प्रकाशित लेखों में अभिव्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं तथा यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

इस अंक में

- पंचायती राज से ग्राम स्वराज तक — श्री वल्लभ शरण — 4
- सार्थक है महिलाओं का आरक्षण — भारत डोगरा — 11
- पंचायती राज और महिलाएं — डा. लक्ष्मीरानी कुलश्रेष्ठ — 13
- पंचायतों के माध्यम से विकेन्द्रीकरण : एक मूल्यांकन — डा. महीपाल — 17
- होड़ (कहानी) — मोहम्मद साजिद खान — 20
- जल संकट : सम्पूर्ण विश्व के सामने एक कठिन चुनौती — डा. दलीप सिंह — 23
- राष्ट्रीय जलनीति, जल–संकट और समाधान के उपाय — डा. उमेश चन्द्र अग्रवाल — 27
- वर्षा के पानी का उपयोग — नवीन पंत — 33
- गुजरात के गांवों में पीने के पानी की समस्या — शैलेश व्यास — 36
- तालाब बांधता धरम सुभाव — 39
- महिला श्रमिकों को उत्पादन कार्य का प्रत्यक्ष लाभ क्यों नहीं मिलता — विभा प्रकाश श्रीवास्तव — 42
- स्वदेशी तकनीकों का विकास और उनके विकल्पों की भूमिका — आलोक पाण्डेय — 44
- सहकारिता में स्वायत्तता — प्रो. उमरावमल शाह — 46

पाठकों के विचार

सभी लेख रुचिकर लगे

ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा प्रकाशित *कुरुक्षेत्र* मासिकांक, फरवरी 2001, प्राप्त हुआ, सधन्यवाद। इस अंक में प्रकाशित विद्वान लेखक श्री अनिल चमड़िया का *ग्रामीण विकास और मीडिया* एवं श्री सत्यपाल मलिक का *किशोर अवस्था शिक्षा : आज की आवश्यकता* बेहद ही प्रासंगिक हैं। जहां पर नंगी सच्चाई उठाकर श्री चमड़िया ने ग्रामीण विकास के लिए मीडिया की प्रतिबद्धता को जागृत किया है वहीं श्री मलिक ने बच्चों के बढ़ते हुए पांव की ओर संकेत कर सार्थक पहल की है। यह ग्रामीण परिवेश की नव–ब्याहताओं के लिए गागर में सागर के समान है। अन्य लेखों में आवरण लेख *ग्राम सभा : विकास की जीवित गंगा* निसंदेह आज के लिए सिर्फ गंगा ही नहीं वरन, यमुना, सरस्वती है एवं *आवश्यकता है एक और हरित क्रांति की* भी काफी सराहनीय लेख हैं, क्योंकि बढ़ती हुई जनसंख्या ने मानव को दानव बना दिया है। जिसका सबसे विकराल रूप है – पेट भरने की समस्या। पेट में भोजन है तो समस्त जगह शान्ति है नहीं तो फिर सभी जगहों पर अशान्ति है, हाहाकार है। इस प्रकार की त्रासदी से बचने के लिए निसंदेह एक और हरित क्रांति की सिर्फ आवश्यकता ही नहीं वरन अनिवार्यता भी है। इसके साथ–साथ सभी लेख एक से बढ़कर एक साबित हुए। कहानी *अंतराल* भी सोचने को मजबूर करती है।

राम रविदास, ग्राम : पैसरा, पोस्ट : गंगपाचो
जिला – हजारीबाग, झारखंड–825323

गाय के प्रति जागरूकता आवश्यक

कुरुक्षेत्र का फरवरी 2001 अंक पढ़ा। शीर्षक लेख *ग्रामीण बेरोजगारों के लिए गोबर – गोमूत्र आधारित कुटीर उद्योग* ग्रामीण बेरोजगार और कार्य की खोज में भटक रहे युवाओं के लिए आर्थिक रूप से लाभकारी तथा शेष पाठकों के लिए बौद्धिक रूप से अत्यंत ज्ञानवर्द्धक है। यह अपने समाज के लिए चिंतनीय विषय है कि हम सभी लोग सूचना प्रौद्योगिकी की तो बहुत बढ़ा–चढ़ाकर चर्चा कर रहे हैं, जो सामान्य जन के लिए रोजी–रोटी उपलब्ध कराने में अब भी सक्षम नहीं है। दूसरी तरफ ग्रामीण अर्थव्यवस्था की जो मूल संरचना है, जिसके आधार पर अब भी ग्रामीण

बेरोजगारी / अर्द्धबेरोजगारी दूर की जा सकती है, पर ध्यान ही नहीं दिया जा रहा है। गो–अर्थव्यवस्था उसी का एक अंग है। सदियों से परंपरागत रूप से भारतीय समाज गाय और उसके उत्पादों पर विश्वासपूर्वक निर्भर रहा है। गो–दूध, दही, घी, बछड़ा, गोमूत्र, गोबर आदि सबके सब मानव के दैनिक जीवन में अति उपयोगी हैं पर उपभोक्तावाद का यह परिणाम सामने आ रहा है कि देशी गाय तो अब बूचड़खानों में ही या कुछ धार्मिक संगठनों के गोशालों में ही दिखाई पड़ सकती है। संकर प्रजाति की गायों के गोमूत्र में विशेष औषधि गुणों की मात्रा काफी कम पाई जाती है। साथ ही उसके बछड़े भी कृषि कार्य [के] लिए उपयोगी नहीं हैं। जन साधारण में गा[य] के प्रति जागरूकता पैदा करना आज [की] आवश्यकता है।

दिवाकर रा[...]
ग्राम+पोस्ट : वाल्मीकि नग[र]
पश्चिमी चम्पारन (बिहा[र])

लेखकों के पते दिए जाएं

कुरुक्षेत्र फरवरी 2001 का अंक प्राप्त किया। इस पत्रिका को मैंने पहली बार देखा। इस[में] प्रकाशित जग नारायणजी का लेख *बहुउपयो[गी] लहसुन* पढ़ा। अच्छा लगा। इस लेख द्वा[रा] यह भी ज्ञात हुआ कि विभिन्न भाषाओं [में] *लहसुन* को क्या कहा जाता है। स्वाति तिवा[री] की लिखी कहानी *अंतराल* और रमेश चन[्द्र] श्रीवास्तव की लिखी लघु कथा *चौथा–पन[्ना]* बहुत ही मार्मिक है। पत्रिका में प्रकाशि[त] लेखकों के पते भी दिया करें तो अच्छा होगा।

राधेश्याम गुप्त, बरई टोला वार्[ड]
देवरिया–274204 (उ.प्र.)

जल संरक्षण है सूखे का स्थायी समाधान

जल ही जीवन है। ग्रीष्मकाल की प्रथ[म] दस्तक ही उत्तरी भारत में जलाभाव के संके[त] को प्रदर्शित करती है। यूं तो देश के अने[क] राज्यों में जलाभाव है। विशेषरूप से राजस्था[न] में सूखाग्रस्तता ही अकाल का प्रतिबिम्ब है। जल संरक्षण ही सूखे का एक मात्र औ[र] विकल्प रहित स्थायी समाधान है। करोड़[ों] रुपये की जल आपूर्ति योजनाएं शुद्ध पेय जल ही अपेक्षित मात्रा में नहीं जुटा पातीं तो सिंचा[ई] क्षेत्र तो उपेक्षित रहना स्वाभाविक है। राजी[व] गांधी राष्ट्रीय पेय जल मिशन व प्रधान मन्त्री ग्रामोदय योजना द्वारा जल संरक्षण के कुछ सरल संसाधनों को प्रस्तावित किया गया है। निःसन्देह उन्हें व्यावहारिकता प्रदान करन[ा] वर्तमान की अनिवार्य मांग है। वस्तुतः इस सदी में पानी इतना मूल्यवान संसाधन प्रमाणित होगा जितना कि 20वीं सदी में तेल था।

जल संरक्षण का सरलतम उपाय 'वाट[र] हार्वेस्टिंग' है। इसका सकल परीक्षण गुजरात राज्य द्वारा किया जा चुका है। संक्षेप [में]

सर्वप्रथम राज्य में ग्रामीण क्षेत्रों में काफी ऊंचे बांध पानी रोकने के लिए निर्मित किए। उस संचित जल की भूमि में रिसाव की व्यवस्था की गई। फलस्वरूप भूगर्भीय नदी का जलस्तर ऊंचा उठता गया। पुनः उस संचित जल को जलाशय में संग्रहित कर उसके उपयोग का अभिनव प्रयोग किया गया। परिणामतः आज उस क्षेत्र में जलाभाव की समस्या का स्थायी समाधान ढूंढ लिया गया है।

जल संरक्षण के सम्बन्ध में केन्द्रीय जल संसाधन मंत्रालय ने शहरी विकास मंत्रालय से अनुरोध किया कि वे दिल्ली विकास प्राधिकरण व अन्य संगठनों को इस प्रकार के मकान निर्माण के निर्देश दें कि जिनकी छतों पर 'वाटर हार्वेस्टिंग' की व्यवस्था की जा सके। वाटर हार्वेस्टिंग योजना जो कि गुजरात राज्य में परीक्षण के आधार पर सफल सिद्ध हुई है तो अन्य राज्य सरकारों को भावी 'जल त्राहि त्राहि' की स्थिति उत्पन्न होने से पूर्व ही इसे मूर्तरूप प्रदान करने के लिये दृढ़ संकल्प का परिचय देना चाहिए।

जलाभाव समस्या का स्थायी निदान रूपी 'वाटर हार्वेस्टिंग' ब्रह्मास्त्र का प्रयोग करने में चूक नहीं करनी चाहिए। इसके लिए सरकारी और गैर सरकारी संगठनों को सामुदायिक रूप से प्रयासरत हो जाना चाहिए। इस योजना का प्रचार–प्रसार युद्ध स्तर पर किया जाना चाहिए और व्यावहारिकता के अंतिम चरण तक क्रांन्तिकारी समाधान का स्वागत किया जाना चाहिए।

एम. राज राकेश, उप प्रधानाचार्य
हैपी उ.मा. विद्यालय, अलवर–301001

मैंने *कुरुक्षेत्र* का फरवरी अंक पढ़ा। हालांकि इस पत्रिका के सभी आलेख अच्छे होते हैं, मगर फरवरी 2001 अंक में मुझे दो आलेख काफी विचारोत्तेजक लगे, पहला अनिल चमड़िया का *ग्रामीण विकास और मीडिया* और दूसरा नवीन पंत का *ग्रामीण विकास की गति तेज करने में जन संचार माध्यमों की भूमिका*। लेखकों ने सच ही मीडिया की भूमिका को बड़ा महत्व दिया है। मगर यह भी सच है कि आज के अर्थपरक युग में मीडिया इस तरह की योजनाओं में ज्यादा रुचि नहीं लेता है क्योंकि प्रायः इनसे कोई अच्छी आमदनी प्राप्त नहीं होती। सरकार के पास ग्रामीण विकास की कई महत्वाकांक्षी योजनाएं हैं मगर लोगों में इनके प्रति जागरूकता नहीं है। इसके कारण दुहरी हानि हो रही है। एक तो जरूरतमंदों तक लाभ नहीं पहुंच रहा है और दूसरे योजना राशि का गबन कुछ दलाल और सरकारी कर्मचारी कर रहे हैं। यदि सरकार और मीडिया पूर्ण सहयोग से ग्रामीण विकास सम्बन्धी योजनाओं का प्रचार करे तो लोगों में जागरूकता बढ़ेगी और योजनाओं का लाभ जरूरतमंदों को मिल सकेगा। संचार माध्यमों को भी इससे लाभ ही होगा क्योंकि जागरूकता बढ़ने से उनकी मांग बढ़ेगी और इससे जागरूकता में और वृद्धि होगी और तब हम तीव्र प्रगति कर सकेंगे।

अवनी कुमार शर्मा
द्वारा श्री अम्बिक चरण शर्मा
समाहार पालम, समस्तीपुर–848101

ग्रामीण बेरोजगारों के लिए कुटीर उद्योग

कुरुक्षेत्र का फरवरी 2001 अंक पढ़ने को मिला। पत्रिका में ग्रामीण क्षेत्रों एवं बेरोजगारों के लिए सामग्री अति उपयोगी लगी। इस अंक के महत्वपूर्ण लेख ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी निवारण के विभिन्न कार्यक्रम, ग्रामीण विकास की गति तेज करने में जन संचार माध्यमों की भूमिका और शिक्षा गारंटी योजना, काफी रोचक लगे।

पत्रिका में ग्रामीण बेरोजगारों के लिए ऐसे स्वतः स्वरोजगार एवं कुटीर उद्योगों को प्रकाशित करें जो नई तकनीक एवं कम लागत में स्थापित हों और उनका मार्केटिंग एवं विपणन आसानी से किया जा सके जिससे ग्रामीण बेरोजगारों को ज्यादा से ज्यादा लाभ पहुंच सके और गांव खुशहाल रहे। ❑

संजय कुमार,
प्रकाश बुक डिपो एण्ड जनरल स्टोर्स,
बरकी (पकड़ीतट) वाराणसी

पाठकों से

इस पत्रिका में *पाठकों के विचार* स्तंभ में पाठकगण ग्रामीण विकास के विभिन्न पहलुओं पर अथवा इस पत्रिका में प्रकाशित लेखों पर अपने विचार भेज सकते हैं। ये विचार दो सौ शब्दों से अधिक के न हों और सम्पादक, कुरुक्षेत्र, ग्रामीण विकास मंत्रालय कृषि भवन, नई दिल्ली–110001 के पते पर भेजे जाएं।

इसके लिए कोई पारिश्रमिक देय नहीं होगा परंतु उन पाठकों को पत्रिका की एक प्रति भेजी जाएगी जिनके विचार इस स्तंभ में प्रकाशित होंगे।

– सम्पादक

पंचायती राज से ग्राम स्वराज तक

श्री वल्लभ शरण

यात्रा तो शुरू हो गई है। मगर लक्ष्य बहुत दूर हैं; यात्रा लंबी है और रास्ते कंकड़ पत्थरों से भरे हैं। मध्य प्रदेश की सरकार ने नेतृत्व देकर एक अनुपम प्रयोग किया है। मध्य प्रदेश पंचायती राज अधिनियम 2001 द्वारा प्रदेश के पंचायती राज अधिनियम की कुछ धाराओं में संशोधन कर और कुछ नई धाराएं जोड़कर ग्राम सभा को सशक्त और जीवंत बनाकर गांव का प्रशासन गांव के लोगों के हाथों में सौंपने का एक ठोस प्रयास किया गया है। ग्राम पंचायत रह जाती है, मगर उसके साथ ही ग्राम स्वराज भी जुड़ता है।

पृष्ठभूमि

इस संदर्भ में प्रयोग के सैद्धान्तिक पक्षों पर विचार करना और आवश्यक होगा। संविधान के अनुच्छेद 40 में प्रारंभ से ही ग्राम पंचायतों के संगठन का प्रावधान है कि "राज्य ग्राम पंचायतों का संगठन करने के लिए कदम उठाएगा और उनको ऐसी शक्तियां और प्राधिकार प्रदान करेगा जो उन्हें स्वायत्त शासन की इकाइयों के रूप में कार्य करने योग्य बनाने के लिए आवश्यक है। प्रावधान संविधान के भाग 4 में "राज्य के नीति निर्देशक तत्व" के अंतर्गत हैं जिसका अनुपालन उस समय अनिवार्य नहीं था। इनमें भी प्रावधान था कि "कदम उठाने का"। बात केवल ग्राम पंचायत के संगठन की थी। शक्तियां क्या और कैसी दी जाएंगी, इसका संकेत तो था, मगर निर्णय राज्यों को लेना था। प्रावधान अभी भी हैं। स्पष्ट है कि प्रावधान लचर हैं। फिर ग्राम सभा की तो कोई चर्चा ही नहीं है, यद्यपि इस प्रावधान के अंतर्गत जो अधिनियम बने, उनमें कुछ राज्यों में (बिहार, उत्तर प्रदेश) ग्राम सभा का प्रावधान था। तबसे, पंचायतों को संवैधानिक आधार दिया जाए, इसकी मांग होती रही। लोक नायक जय प्रकाश नारायण इसके अग्रणी समर्थक थे। अंततः स्वर्गीय राजीव गांधी के प्रधानमंत्रित्व काल में संविधान संशोधन के लिए जो विधेयक संसद में आया और राज्य सभा में नहीं पारित होने के कारण कानून का रूप नहीं ले सका। उसमें पंचायतों को (जिनके अंतर्गत ग्राम, प्रखंड और जिला स्तर तक की पंचायतें शामिल थीं) संवैधानिक आधार तो दिया गया था, मगर उसमें ग्राम सभा की कोई व्यवस्था नहीं थी। अनेक स्वैच्छिक संस्थाओं की ओर से इस कमी को पूरा करने की पुरजोर मांग उठी ओर 73वें संविधान संशोधन अधिनियम में इसका प्रावधान किया गया। मगर, प्रावधान बड़ा सीमित है।

अपर्याप्त प्रावधान

अनुच्छेद 243 में ग्राम सभा की परिभाषा है जिसके अनुसार ग्राम गांव के सभी मतदाताओं की सभा है। स्पष्ट है कि एक गांव के सभी वयस्क व्यक्ति सामान्यतः मतदाता होते हैं। चूंकि संविधान में वयस्क मताधिकार का प्रावधान है, इस प्रकार ग्राम सभा के सभी वयस्क लोगों की सभा स्वतः हो जाती है। न कोई चुनाव की आवश्यकता है, न किसी अधिसूचना की। इस प्रकार अनुच्छेद 243 के अनुसार ग्राम सभा स्वतः बन गई। मगर बनना मात्र पर्याप्त नहीं है। उसे ग्राम की आवश्यकताओं के अनुसार सभी कार्य करने की शक्ति और अधिकार प्राप्त हों, तभी उसका बनना सार्थक है। संविधान के प्रावधान इस दृष्टि से अपर्याप्त हैं।

अनुच्छेद 243 (क) में प्रावधान है कि ग्राम के स्तर पर ग्राम सभा के ऐसे कार्य होंगे जो राज्य विधान मंडल के द्वारा उन्हें दिये जाएं। इस प्रकार गांव के स्तर पर ग्राम सभा के, जो गांव के सभी मतदाताओं की संवैधानिक संस्
है, कार्य अनिश्चित हैं। निश्चित कार्य, वे
आंशिक रूप में ही, ग्राम पंचायत के हैं औ
वह गांव के मतदाताओं द्वारा कुछ प्रतिनिधि
से बनी संस्था है। इस प्रकार देश में, देश
लोक प्रशासन से सम्बद्ध कोई भी संस्
प्रत्यक्ष रूप से लोगों की संस्था नहीं है
पंचायत से लेकर राज्य विधान मंडल औ
संसद तक सभी संस्थाएं प्रतिनिधि संस्थाएं
और अप्रत्यक्ष रूप से ही लोगों की संस्थाएं है

विविधतापूर्ण इस देश में लोकतंत्र का य
कैसा स्वरूप हुआ जिसमें सामूहिक रूप
आम लोगों का लोक प्रशासन में कोई हा
नहीं हो। सब कुछ सरकार पर निर्भर रहे वि
वे लोगों को किस हद तक किस कार्य
शामिल करती है। ऐसी स्थिति में भागीदार
का एक मात्र मार्ग चुनाव में मतदान त
सीमित रह जाता है, वह भी यदि चुना
पूर्णतः निष्पक्ष हों और सभी मतदाताओं क
मतदान देने का अवसर मिले – जैसा अने
स्थानों पर शुरू से ही नहीं होता रहा है, औ
जिसकी स्थिति दिन प्रति दिन (चुनावों
जोर जबर्दस्ती, कमजोर वर्ग के लोगों क
मतदान नहीं करने देना, हिंसा, चुनाव
भ्रष्टाचार) बिगड़ती जा रही है। नीचे से ऊप
तक, पंचायतों से संसद तक, आपराधिक चरि
के अनेक व्यक्ति बाहुबल और धनबल
सहारे चुनाव जीत कर जन प्रतिनिधि हो ग
हैं। वे देश के लिए कानून बनाते हैं, प्रशास
में प्रत्यक्ष रूप से हस्तक्षेप करते हैं और य
सब जनतंत्र के नाम पर, जनतंत्र के अंतर्ग
हो रहा है।

कानून और नियम तो देश और राज्य
स्तर पर बनते हैं, मगर प्रशासन का प्रभा
देहाती क्षेत्रों में पड़ता है। स्कीमें गांव
चलती हैं। न उनके बनाने में, न उनक

ग्राम सभा का होना तभी सार्थक होगा जब उसे शक्तियां और अधिकार दिए जाएंगे

कार्यान्वयन या मूल्यांकन में आम लोगों की कोई भूमिका है। लोग विवश हैं। मूक दृष्टा हैं। इस विकृति से देश को बड़ी क्षति पहुंची है। गरीबी, बेकारी, भ्रष्टाचार ने लोगों का मनोबल तोड़ दिया है और लोग (उन्हें छोड़ कर जो इस विकृति से लाभांवित हो रहे हैं) निराशा और कुंठा से घिरे हैं। समाज बंटा है। अशांति और हिंसा बढ़ी है। लोगों की, यानी आम लोगों की परेशानियां बढ़ी हैं। इस गिरावट और कुव्यवस्था को रोकने के लिए, यह आवश्यक है कि जहां तक संभव हो, लोक प्रशासन में लोगों की प्रत्यक्ष भागीदारी बढ़ाई जाए।

ग्राम सभा के निष्प्रभावी होने के कारण

देश के स्तर पर यह संभव नहीं है, राज्य, जिला या प्रखंड के स्तर पर भी यह संभव नहीं है। सभी पंचायतों में भी ऐसा नहीं हो सकता क्योंकि देश या राज्य के स्तर पर बहुत पंचायतों में एक से अधिक गांव आते हैं। अनुच्छेद 243 में गांव की जो परिभाषा दी गई है, उसके अनुसार सरकार की अधिसूचना के अनुसार गांवों के एक समूह को भी एक गांव माना जा सकता है। वैसा होने पर, आबादी बहुत बढ़ जाती है, गावों के बीच की दूरियां बढ़ जाती हैं। पंचायत के अंतर्गत हर गांव का वातावरण भी एक तरह का नहीं होता है। इन कारणों से, और इनके साथ ही ग्राम सभा के सशक्त नहीं रहने के कारण, ग्राम सभा में उपस्थिति बहुत कम हो जाती है। कोरम तक नहीं पूरा होता। अनेक अध्ययन इस विषय पर हुए हैं। मध्य प्रदेश में एक अध्ययन में पाया गया कि ग्राम सभाओं में बहुत सीमित विषयों पर चर्चा होती है – मुख्यतः गरीबी की रेखा के नीचे नाम जोड़ने जुड़वाने के लिए या कोई ठेका वगैरह लेने के लिए। अधिकांश लोगों के इसमें दिलचस्पी नहीं रहती। चुस्त–चालाक संरपंच घर–घर रजिस्टर घूमवाकर, लोगों का दस्तखत लेकर, गणपूर्ति की खानापूर्ति करवा लेते हैं। फिर, गणपूर्ति के अभाव में, बैठक स्थगित हो जाती है और स्थगित बैठक के फिर होने पर मध्य प्रदेश पंचायत अधिनियम की धारा 6 (2) (ब) के अंतर्गत अब तक गणपूर्ति की आवश्यकता ही नहीं थी। अब हो गई है। मगर अधिकांश राज्यों के अधिनियमों में ऐसा ही प्रावधान है। इससे चालाक सरपंचों को अपने मन के अनुसार निर्णय करवा लेने का स्वर्णिम अवसर मिल जाता है। अपने दो–चार व्यक्तियों के साथ बैठक कर ली और स्थगित बैठक में उन पर निर्णय लेकर, निर्णयों पर ग्राम सभा की मुहर लगा दी। वैसे सरपंच ऐसी ही व्यवस्था करते हैं जिनसे ग्राम सभा की बैठक में लोग आए नहीं, बैठक स्थगित हो जाए और स्थगित बैठक होने के कारण, मनचाहे निर्णय ले लें। वैसा करना बहुत आसान है–बैठक की सूचना ही समय पर नहीं दी, बैठक का स्थान और समय वैसा रखा कि लोग–विशेषतः मजदूर वर्ग के, वृद्ध और स्त्रियां, जाएं ही नहीं। अपेक्षाकृत संपन्न लोग, जिनके नाम गरीबी रेखा के नीचे लोगों की सूची में नहीं हैं या नाम हैं भी तो नाम रहने का लाभ उठा चुके हैं, बैठक में आते ही नहीं। फिर गणपूर्ति हो तो कैसे? इस प्रकार ग्राम सभा के निर्णय लिए जाते हैं, मगर वास्तव में ग्राम सभा में लोग रहते नहीं, न किसी विषय पर कोई सार्थक चर्चा होती है। काम कागजी हो जाता है और ग्राम सभा से लोगों का विश्वास उठता जा रहा है। ऐसे वातावरण में, पंचायतें–स्वशासन की संस्थाएं कैसे बन पाएंगी? यदि इसमें परिवर्तन नहीं होता है तो संवैधानिक संस्था होने के कारण पंचायत तो रहेगी, मगर बेजान और गतिहीन रूप में। फिर सारा प्रयास ही विफल हो जायेगा। आम लोगों की ग्रामीण प्रशासन में भागीदारी नहीं हो पाएगी और उसके अभाव में जनतंत्र में उनका विश्वास हिलने लगेगा। वैसी स्थिति देश के लिए बहुत ही हानिकारक होगी। शोषण बढ़ेगा; समाज में आर्थिक–शैक्षणिक–सामाजिक विषमता बढ़ेगी और इन सब की परिणति बढ़ती निराशा, अंशाति और हिंसा में हो सकती है।

लोगों की भागीदारी बढ़ाने की आवश्यकता

अतएव, यह सर्वथा आवश्यक है कि देश में जनतंत्र की जड़ मजबूत करने के लिए, लोगों के आर्थिक–सामाजिक जीवन में उन्नति के लिए, एक सजग और समृद्ध राष्ट्र बनाने के लिए, व्यवस्था में वैसा परिवर्तन किया जाए जिससे केवल प्रतिनिधियों की नहीं – वे तो विभिन्न स्तरों पर रहेंगे ही–सामान्य लोगों की भी प्रशासन में भागीदारी इस प्रकार बढ़ाई जाए कि प्रत्येक मतदाता की उचित भूमिका हो उसे निभाने का उसे अवसर मिले।

यह एक भ्रम है कि प्रशासन इतना तकनीकी विषय है और उसके लिए ऐसी योग्यता चाहिए कि उसे सामान्य लोग नहीं चला सकते। गांव

के स्तर पर जो काम होते हैं, वे आए दिन के जीवन से जुड़े, सामान्य प्रकृति के काम होते हैं। राष्ट्र या राज्य स्तर की बड़ी नीतियां नहीं बनतीं; तकनीकी दृष्टि से उलझे हुए या बड़े खर्चीले काम नहीं होते; मुख्य कार्य ग्राम स्तर के विकास से जुड़ी स्कीमों और ग्रामीण प्रशासन से जुड़े कुछ काम ही होते हैं। ये काम इस प्रकार के हैं कि जो भी सामान्य बुद्धि का व्यक्ति अपने घर का कारोबार चलाता है, वह गांव के प्रशासन में बिना किसी हिचक के भाग लेने की क्षमता रखता है। जो अपनी खेती करता है, बीज उपजाता है और उसका व्यवहार जानता है, खाद बनाता और उपयोग करता है, ग्राम स्थित सिंचाई सुविधाओं का उपयोग करना जानता है, अपना घर बनाता है, रोजमर्रे की बहुत सारी चीजें, जो कुटीर और ग्राम उद्योग के अंतर्गत आती हैं, उन्हें बनाना जानता है और उनकी खरीद–बिक्री करता है, बाग लगाता है, अपने बच्चों की शिक्षा का प्रबंध करता है, आपातकाल की स्थिति में अपने घर और मुहल्ले को – आग, बाढ़, आदि से बचाता है, रात में जाग कर अपनी संपत्ति की रक्षा करता है, निश्चय ही वह इस योग्य है कि गांव में इन और इन जैसी वस्तुओं का संवर्द्धन, नियंत्रण, प्रशासन कैसे हो सकता है, उसकी निर्णय–प्रक्रिया में भाग ले सके। उसे यदि थोड़ा प्रशिक्षण मिल जाए, आधुनिक प्रौद्योगिकी और उपकरणों का ज्ञान हो जाए, राज्य प्रशासन से जहां अपेक्षित हो, समय पर उचित सहायता मिल जाए, जहां न्याय की जरूरत हो, न्याय मिल जाए तो दूर बैठे सरकारी अधिकारियों की या चुने हुए कुछ व्यक्तियों की अपेक्षा, सामूहिक रूप से वे बड़े प्रभावकारी ढंग से उन कार्यों से सम्बद्ध विषयों की दीर्घ और अल्पकालीन योजनाएं बना सकते हैं, उनका कार्यान्वयन और मूल्यांकन कर सकते हैं। दिन–प्रतिदिन की भागीदारी से प्रत्येक व्यक्ति को लगेगा कि गांव उसका है, प्रशासन उसके लिए है, व्यवस्था उसके हित में है और इससे अंततः गांव, समाज और देश के प्रति उसकी प्रतिबद्धता बढ़ेगी, जिससे गांव समृद्ध होंगे। समाज में समानता और समरसता बढ़ेगी। देश संगठित और सुदृढ़ बनेगा और विश्व में गौरव के साथ अपना सिर उठाकर अपना स्थान बना सकेगा। जिस स्तर पर देश के आम लोग रहते हैं, उस स्तर पर होने वाले कार्यों में उपलब्ध प्राकृतिक और मानव संसाधनों को ध्यान में रखते हुए आम लोगों की, जिनमें महिलाएं, अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लोग, सामाजिक–आर्थिक दृष्टि से कमजोर और पिछड़े लोग समान रूप से शामिल हैं, पूरी भागीदारी देश की आंतरिक शक्ति और समृद्धि की अनिवार्य शर्त है। उनकी उपेक्षा कर और शक्तियों को कुछ चुने हुए (चाहे जैसे भी चुने गए हों) लोगों की मुट्ठियों में सौंप कर, देश कदापि आर्थिक संपन्नता और सामाजिक–सांस्कृतिक समता नहीं प्राप्त करेगा और मुखौटा चाहे जो भी रहे, देश में, सच्चे अर्थ में जनतंत्र की जड़ मजबूत नहीं हो पायेगी। ग्राम सभा की सुदृढ़ता में देश की सुदृढ़ता छिपी है, इस तथ्य को स्वीकार करना आज की अनिवार्यता है।

विविधतापूर्ण इस देश में लोकतंत्र का यह कैसा स्वरूप हुआ जिसमें सामूहिक रूप से आम लोगों का लोक प्रशासन में कोई हाथ नहीं हो। सब कुछ सरकार पर निर्भर रहे कि वे लोगों को किस हद तक किस कार्य में शामिल करती है। ऐसी स्थिति में भागीदारी का एक मात्र मार्ग चुनाव में मतदान तक सीमित रह जाता है, वह भी यदि चुनाव पूर्णतः निष्पक्ष हों और सभी मतदाताओं को मतदान का अवसर मिले।

असाधारण उपलब्धियां

परंतु अनुभव यह रहा है कि ग्राम सभा के प्रति गांव से लेकर तक प्रभावशाली लोगों को संदेह है कि ग्राम सभा सफल नहीं हो सकती। गांव बंटे हुए हैं। बड़े किसानों और मजदूरों के बीच तनाव है; लोग धर्म और जातियों – जनजातियों में बंटे हैं और उनके बीच वैमनस्य है; राजनीतिक दलबंदी और गुटबंदी गांव तक पहुंच चुकी है और उन्होंने वातावरण को तनाव और द्वेष–पूर्ण बना रखा है। इन कारणों से गांव के सभी लोग किसी भी बात पर कभी एक मत नहीं हो सकते। इसलिए ग्राम सभाओं में हर बात पर विवाद और झगड़े होंगे और किसी भी मुद्दे पर कोई निर्णय ले पाना कठिन होगा। वैसी स्थिति में सब कामकाज ठप हो जायेंगे और जो भी थोड़े बहुत काम हो रहे हैं, वे बंद हो सकते हैं। समाज के और बंट जाने और आपसी विरोध के और बढ़ जाने की आशंका भी है।

ऐसा नहीं कहा जा सकता कि ये सब शंकाएं निमूल हैं। संभव है कहीं–कहीं ऐसा हो, कम से कम प्रारंभ में। मगर उसका निदान भी ग्राम सभा ही है। ग्राम सभा एक मंच प्रदान करेगी समाज के सभी वर्गों को – अपेक्षाकृत संपन्न और विपन्न दोनों को; स्त्री और पुरुष को, दलित और तथाकथित उच्च वर्ग के लोगों को। एक अवसर मिलेगा इकट्ठा होने का, साथ–साथ बैठने का, एक दूसरे की बातों को सुनने–समझने का। धीरे–धीरे ही सही, इससे सामाजिक समता आएगी। चूंकि ग्राम सभा एक संवैधानिक संस्था है, इसलिए किसी को कोई उसमें आने से रोक नहीं सकेगा। चूंकि सामान्यतः बैठक किसी सार्वजनिक स्थान पर ही होगी (पंचायत भवन में, जहां पंचायत भवन नहीं है, वहां सामुदायिक भवन में, स्कूल में या किसी और दूसरे सार्वजनिक स्थान में) इसलिए वहां जाने से कोई मना नहीं कर सकता। सामान्यतः बैठेंगे लोग साथ–साथ ही, सतह पर। यदि कुर्सियां–बेंच रहेंगे भी तो अधिकांश लोग एक साथ ही बैठेंगे। यह ठीक है कि अनेक स्थानों पर अभी स्त्रियां पुरुषों से हटकर, एक समूह में अलग से बैठ रही हैं, यह भी सत्य है कि उनमें अनेक घूंघट में जाती हैं; अधिकांश स्त्रियां बैठक में चुप रहती हैं, मगर ये सब प्रारंभिक स्थितियां हैं। जैसे–जैसे समय बीतेगा, और ग्राम सभा की अधिक बैठकें होगी, दृश्य बदलता जाएगा। पिछले चार–पांच वर्षों में ही काफी बदलाव

आया है जब कि ग्राम सभा अभी सशक्त रूप से काम कर भी नहीं रही हैं। जो घूंघट में आती थीं,, अब वे अन्य स्त्रियों की तरह खुले चेहरे आ रही हैं; जातिगत भेदभाव के कारण जो लोग अलग–अलग बैठते थे, अब वे साथ बैठ रहे हैं। ये सब बड़ी उपलब्धियां है। मनोवृत्ति में, जो सदियों की उपज है और अशिक्षा, अंधविश्वास, गरीबी, ताड़ना में पली हैं, थोड़ा भी बदलाव–सिर उठाकर चलने की

कानून और नियम तो देश और राज्य के स्तर पर बनते हैं, मगर प्रशासन का प्रभाव देहाती क्षेत्रों में पड़ता है। स्कीमें गांव में चलती हैं। लेकिन उनके बनाने में, उनके कार्यान्वयन या मूल्यांकन में आम लोगों की कोई भूमिका नहीं है। लोग विवश हैं। मूक दृष्टा हैं।

ललक, रूढ़ियों के बंदी समाज के लिए बड़ी उपलब्धियां हैं सर्वथा स्वागत के योग्य हैं। कुछ कुएं और सड़क बनाने की अपेक्षा वे बहुत ही बहुत दीर्घकालीन प्रभाव डालने वाली और समाज को समता की ओर ले जाने वाली उपलब्धियां हैं।

सही ग्राम–स्वराज

सामाजिक समता समाज के विकास की पहली शर्त है। यदि सामाजिक समता नहीं आती है, तो पिछड़े वर्ग के लोगों की प्रतिभा का विकास अवरुद्ध होगा और इसका दुष्परिणाम संपूर्ण समाज पर पड़ेगा। उसके अभाव में लोग हमेशा बंटे के बंटे रहेंगे। सामाजिक समता के अवसर से समता आएगी; लोगों की कुंठित शक्तियां जगेंगी; प्राकृतिक और मानव संसाधनों का समुचित उपयोग हो सकेगा और इन सबसे समाज के लोगों का शैक्षणिक और सांस्कृतिक विकास होगा। सामाजिक समता से उच्च वर्गों की उच्चता नीचे नहीं हो जाती, उससे शोषितों और दलितों को ऊपर उठने का अवसर मिलता है और इसमें उसका हित और सबकी भलाई है। सभी ऊपर उठेंगे; एक सुंदर समाज बनेगा जिसमें हर व्यक्ति के लिए स्थान होगा; प्रत्येक व्यक्ति को अवसर मिलेगा कि वह अपनी योग्यता को बढ़ाए और उसके अनुरूप अपना स्थान बनाए। सामाजिक समता छीना–झपटी के लिए नहीं है; वह पारस्परिक सहयोग और सौहार्द को बढ़ाने के लिए है। वह विकास के विपरीत नहीं, उसके विस्तार और संवर्द्धन के लिए है। ग्राम–सभा सामाजिक समता का सबसे प्रभावकारी माध्यम है और उसमें नये, विकासोन्मुख समाज का बीज है। प्रत्येक व्यक्ति का अस्तित्व, प्रत्येक व्यक्ति को अवसर, प्रत्येक व्यक्ति का विकास, सही ग्राम–स्वराज है।

अपने देश के आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिवेश में, यदि हम देश के अतीत में झांक कर देखें, वर्तमान को परखें और भविष्य का सकारात्मक स्वरूप पहचान सकें तो जो प्रतिनिधि संस्थाएं देश में हैं, उनमें जहां–जहां विकृति आ गई है, वहां–वहां उनका परिमार्जन और ग्राम–सभा का ग्रामीण जीवन में सशक्त नेतृत्व आज की अनिवार्यता है। अतएव, मध्य प्रदेश का नेतृत्व प्रासंगिक, समयानुकूल और लोकहित में है – सबके हित में, सबके लिए; स्वागत और समर्थन के योग्य।

अब प्रश्न है कि वह किस रूप में आया है? मध्य प्रदेश पंचायत राज अधिनियम का नाम अब मध्य प्रदेश पंचायत राज एवं ग्राम स्वराज अधिनियम हो गया है। सबसे महत्वपूर्ण परिवर्तन ग्राम सभा के स्वरूप और उसकी कार्य एवं शक्ति–परिधि के क्षेत्र में हुआ है।

नए प्रावधान

मूल अधिनियम की धारा 5 के बाद अधिनियम में एक नई धारा 5 क जोड़ी गई है जिसके अनुसार प्रत्येक ग्राम के लिए ग्राम सभा होगी। ग्राम सभा एक नियमित निकाय होगी जिसे चल–अचल संपत्ति अर्जन करने का अधिकार होगा। मूल धारा 6 के प्रावधानों को पूर्णतः हटाकर उनके स्थान पर नए प्रावधान किए गए हैं जिनसे ग्राम–सभा की बैठक महीने में कम से कम एक बार होगी (प्रारंभ में साल में इस प्रकार की एक बैठक का प्रावधान था, उसे संशोधित कर बैठकों की संख्या 4 की गई थी); बैठक की तिथि और समय का निर्धारण ग्राम सभा स्वयं करेगी सिवा पहली बैठक की तिथि और समय के, जो सरपंच करेंगे, गणपूर्ति कुल सदस्यों के 20 प्रतिशत सदस्यों से होगी (पहले यह संख्या 10 प्रतिशत थी) और जहां पहले स्थगित बैठक के लिए गणपूर्ति आवश्यक नहीं थी, वहां अब यह

गणपूर्ति के अभाव में, बैठक स्थगित हो जाती है और स्थगित बैठक के फिर होने पर मध्य प्रदेश पंचायत अधिनियम की धारा 6 (2) (ब) के अंतर्गत अब तक गणपूर्ति की आवश्यकता ही नहीं थी। अब हो गई है। मगर अधिकांश राज्यों के अधिनियमों में ऐसा ही प्रावधान है। इससे चालाक सरपंचों को अपने मन के अनुसार निर्णय करवा लेने का स्वर्णिम अवसर मिल जाता है। अपने दो–चार व्यक्तियों के साथ बैठक कर ली और स्थगित बैठक में उन पर निर्णय लेकर, निर्णयों पर ग्राम सभा की मुहर लगा दी।

आवश्यक बना दी गई है। गणपूर्ति में कम से कम एक तिहाई महिलाएं होनी चाहिए और उसी प्रकार अनुसूचित जाति/जनजाति के लोगों की उपस्थिति भी, उनकी संख्या के अनुपात में आवश्यक है। सरपंच ग्राम सभा की अध्यक्षता, पहले की तरह ही करते रहेंगे।

सरपंच या 10 प्रतिशत से अधिक या 50 सदस्य (दोनों में जो भी कम हो) ग्राम सभा की विशेष बैठक के लिए आग्रह कर सकते हैं और ऐसी बैठक सात दिनों के अंदर

बुलाई जायेगी। इस प्रकार की बैठक के लिए पहले कुल सदस्यों के एक तिहाई लोगों की मांग जरूरी थी और वैसी बैठक 30 दिनों के अंदर हो सकती थी।

पहले ग्राम सभा के निर्णय बहुमत के द्वारा होते थे, अब सामान्यतः एकमत से होंगे। एक बार यदि एकमत नहीं बन पाया तो सम्बद्ध विषय पर विचार स्थगित हो जाएगा और दूसरी बैठक में विचार होगा और दूसरी बैठक में भी एकमत नहीं बन पाया तो तीसरी बैठक में बहुमत से गुप्त मतदान के द्वारा निर्णय लिया जायेगा।

कार्य क्षेत्र का विस्तार

कार्य–क्षेत्र में काफी विस्तार हुआ है। पहले 1997 में ही, अनुसूचित क्षेत्रों की ग्राम सभाओं के संबंध में जब अधिनियम में संशोधन हुए थे, सामान्य क्षेत्रों की ग्राम–सभाओं के सम्बन्ध में भी संशोधन हुए (मध्य प्रदेश अधिनियम संख्या 43, 1997)। वर्तमान संशोधन द्वारा उसके कार्य–क्षेत्र को और विस्तृत किया गया है। मूल अधिनियम की धारा 7 की उपधारा (1) में खण्ड 'ट' के स्थान पर नया खण्ड लाकर ग्राम की स्वच्छता तथा ग्राम प्रशासन से सम्बद्ध अनेक कार्य जैसे सार्वजनिक भूमि का प्रबन्धन; ग्राम सभा की संपत्ति का अनुरक्षण; जन्म, मृत्यु और विवाह के अभिलेखों का रखना; संक्रामक रोगों की रोकथाम आदि जैसे करीब चार दर्जन कार्य जो पहले ग्राम पंचायत के कार्य क्षेत्र में थे, अब ग्राम सभा की कार्य–परिधि में ला दिए गए हैं।

अनेक महत्वपूर्ण अधिकार जैसे – गांव के आर्थिक विकास के लिए प्राथमिकता तय करना, स्कीमों की पहचान, कार्यान्वयन के पहले, योजना और स्कीमों की स्वीकृति, वार्षिक बजट पर विचार; लेखा और अंकेक्षण प्रतिवेदन पर विचार करना, ग्राम पंचायत निधि के उपयोग का प्रमाणपत्र देना, विभिन्न स्कीमों के अंतर्गत लाभार्थियों का चयन, सामुदायिक कल्याण और विकास के लिए जन–समर्थन जुटाना, आदि जैसे दायित्व तो पहले ही प्राप्त हो गये थे। ग्राम–सभा पिछले वर्ष के प्रशासन –प्रतिवेदन, अगले वर्ष के विकास–कार्यक्रम आदि पर भी विचार करने के लिए पहले से ही सक्षम है।

स्थायी समितियां

एक नई धारा 7 (क) के द्वारा आठ स्थायी और आवश्यकतानुसार तदर्थ समितियों के गठन का प्रावधान किया गया है। स्थायी समितियां विकास के विभिन्न आयामों से सम्बद्ध हैं – कृषि समिति, स्वास्थ्य समिति, अधो संरचना समिति, शिक्षा समिति। एक–एक समिति सार्वजनिक संपदा, ग्राम रक्षा और सामाजिक न्याय पर है। ग्राम विकास समिति योजना देखेगी और समन्वय का कार्य करेगी।

आम लोगों, जिनमें महिलाएं, अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लोग, सामाजिक–आर्थिक दृष्टि से कमजोर और पिछड़े लोग समान रूप से शामिल हैं, की पूरी भागीदारी देश की आंतरिक शक्ति और समृद्धि की अनिवार्य शर्त है। उनकी उपेक्षा कर और शक्तियों को कुछ चुने हुए (चाहे जैसे भी चुने गए हों) लोगों की मुट्ठियों में सौंप कर, देश कदापि आर्थिक संपन्नता और सामाजिक–सांस्कृतिक समता नहीं प्राप्त करेगा और मुखौटा चाहे जो भी रहे, देश में, सच्चे अर्थ में जनतंत्र की जड़ मजबूत नहीं हो पायेगी। ग्राम सभा की सुदृढ़ता में देश की सुदृढ़ता छिपी है, इस तथ्य को स्वीकार करना आज की अनिवार्यता है।

समितियां अधिनियम के अंतर्गत बने नियम के अनुसार कार्य करेंगी। सभी के अध्यक्ष उनके सदस्यों द्वारा चुने जाएंगे और ग्राम विकास समिति, सरपंच की अध्यक्षता में, सभी अन्य अध्यक्षों के साथ बनेगी। विभिन्न समितियों के अध्यक्ष चक्रानुक्रम के द्वारा सामान्य वर्ग, अनुसूचित जाति और जनजाति, पिछड़ा वर्ग और महिलाओं में से चुने जाएंगे। समितियों के कार्य समय–समय पर ग्राम सभा द्वारा निर्धारित होंगे और सभी समितियां ग्राम सभा के प्रति उत्तरदायी होंगी। ग्राम–सभा समितियों के किसी भी सदस्य की सदस्यता समाप्त कर सकती है।

ग्राम विकास समिति को छोड़कर, अन्य समितियों दो–तिहाई बहुमत से ऐसे व्यक्ति को अपना सचिव चुनेंगी जो उस समिति के सदस्यों में से किसी का संबंधी नहीं हो। सचिव की शैक्षणिक योग्यता समिति निर्धारित करेगी और उसका पद अवैतनिक रहेगा।

समिति के किसी निर्णय के विरुद्ध अपील सुनने का अधिकार एक समिति को है जिसमें जनपद पंचायत के अध्यक्ष, जनपंचायत के सम्बद्ध क्षेत्र से आने वाले सदस्य और अनुमंडल पदाधिकारी (रेवन्यू) रहेंगे। अपील समिति कैसे कार्य करेगी, इसका निर्धारण नियम के अंतर्गत होगा।

ग्राम सभा एक निधि स्थापित करेगी जिसके निम्नांकित चार भाग होंगे –

- अन्न कोष
- श्रम कोष
- वस्तु कोष
- नगद कोष

दान या दूसरे स्रोतों से प्राप्त धन; ग्राम पंचायत निधि से प्राप्त राशि, ग्राम सभा द्वारा लगाये गये करों से प्राप्त राशि, विभिन्न स्कीमों के अंतर्गत सरकार से प्राप्त राशि से इन कोषों का गठन होगा और इनका उपयोग और रख–रखाव नियमों के अनुसार होगा। ग्राम विकास समिति कोष का संचालन करेगी। ग्राम सभा की स्वीकृति से, ग्राम विकास समिति के सचिव और कोषाध्यक्ष (जो ग्राम विकास समिति द्वारा मनोनीत होगा) के संयुक्त हस्ताक्षर से रुपयों की निकासी होगी।

लेखा रख–रखाव का दायित्व ग्राम–सभा पर है और लेखा का अंकेक्षण नियम के अंतर्गत बने प्रावधानों के अनुसार होगा।

ग्राम सभा के स्तर पर काम करने वाले सरकारी कर्मचारियों पर ग्राम सभा का पूरा नियंत्रण होगा। ग्राम सभा उनका वेतन रोक

सकने, उन्हें अवकाश स्वीकृत करने, उनके कार्यों का निरीक्षण–पर्यवेक्षण करने के लिए सक्षम है। काम में ढिलाई और अकर्मण्यता या अनुचित काम करने की स्थिति में, ग्राम सभा कर्मचारी के विरुद्ध कार्रवाई के लिए सक्षम पदाधिकारी के यहां अनुंशसा करने के लिए सक्षम है।

अपने कार्यों के संपादन के लिए ग्राम सभा के अधिनियम की अनुसूची 1–क अनिवार्य 2–क वैकल्पिक करों पर है। भूमि और भवन

ग्राम सभा एक मंच प्रदान करेगी। समाज के सभी वर्गों को–अपेक्षाकृत संपन्न और विपन्न दोनों को; स्त्री और पुरुष को, दलित और तथाकथित उच्च वर्ग के लोगों को। एक अवसर मिलेगा इकट्ठा होने का, साथ–साथ बैठने का, एक दूसरे की बातों को सुनने–समझने का। धीरे–धीरे ही सही, इससे सामाजिक समता आएगी।

कर (छह हजार रुपये से अधिक की संपत्ति होने पर), प्रकाश कर, संडास कर (निजी संडास कर), आजीविका कर अनिवार्य करों में है। विभिन्न कार्यों के लिए जैसे, सार्वजनिक चारागाह में चराई; विभिन्न सार्वजनिक स्थानों के उपयोग (धर्मशाला, बैलगाड़ी स्टैण्ड) आदि के लिए फीस लगाने की व्यवस्था है और यह वैकल्पिक है। एक महत्वपूर्ण प्रावधान यह है कि ग्राम सभा कोई भी ऐसा कर लगा सकती है जिसे लगाने की शक्ति राज्य विधान मंडल को है।

नया प्रयोग

इस प्रकार ग्राम सभा को संगठन, कार्य एवं अधिकार क्षेत्र, आय–स्रोत, कर्मचारियों के कामकाज पर नियंत्रण आदि सभी दृष्टियों से सशक्त करने का प्रयास किया गया है ताकि वह एक प्रभावकारी संस्था के रूप में कार्य कर सके। और, चूंकि ग्राम सभा में ग्राम सभा के सभी वयस्क हैं जो मताधिकार के योग्य हैं–स्त्री और पुरुष, गरीब और अपेक्षाकृत संपन्न, किसान और मजदूर, अनुसूचित जाति, जनजाति, पिछड़े और सामान्य वर्गों के लोग, इसलिए बिना किसी भेदभाव के ग्राम सभा सबकी संस्था है और उसे सशक्त करना ग्राम के सभी लोगों को सशक्त करना है ताकि सब लोग ग्राम के कार्यों में भाग लें (जिस हद तक वे ग्राम में हो सकते हों) स्वयं ग्राम का प्रशासन संभालें और जनतंत्र के उस रूप को कि वह लोगों को, लोगों के द्वारा, लोकहित में चलने वाली व्यवस्था है, सार्थक और मूर्त्त रूप दें।

मगर, ग्राम–सभा के सशक्तिकरण के कुछ दूसरे पहलू भी हैं। इससे ग्राम–पंचायत के, जो निर्वाचन–क्षेत्र के आधार पर चुनी हुई संस्था है, अधिकारों में कमी आई है। सरपंच के स्थान पर भी प्रभाव पड़ा है। यहां वे संपन्न और शक्तिशाली होंगे, वहां ग्राम–पंचायत, ग्राम सभा, ग्राम विकास समिति, सबके अध्यक्ष रहने के कारण, वे और शक्तिशाली बन सकते हैं; मगर जहां वे सामान्य प्रकृति के होंगे, वहां समितियों के अध्यक्षों से पूरा सहयोग नहीं मिलने की स्थिति में वे कमजोर हो सकते हैं। दोनों ही स्थितियों में ग्राम–सभा का संचालन कैसा रहेगा, यह देखने की बात है। ग्राम पंचायत और ग्राम सभा के सचिव एक व्यक्ति और समितियों के सचिव अलग–अलग हैं। उनके बीच सामान्य समन्वय की जरूरत होगी। जो गांव छोटे हैं और जहां सामान्य लोग रहते हैं, वहां अधिक सुगमता से काम होने की आशा है; मगर, जो गांव बड़े हैं; या जहां संपन्न लोग रहते हैं, वहां दिक्कतें अधिक हो सकती हैं। ग्राम–सभा तो हर गांव की होगी और पंचायत में एक से अधिक गांव हो सकते हैं और तदनुसार एक से अधिक ग्राम–सभाएं हो सकती हैं, इससे भी कई समस्याएं उठ सकती हैं। पंचायत की सदस्यता के लिए नई योग्यताएं, अयोग्यताएं है; ग्राम सभा की समितियों के लिए ऐसा नहीं है। इससे आपराधिक चरित्र के, सजा पाए लोग भी ग्राम–सभा की समितियों में आ जा सकते हैं अनुभव के साथ इन सबका निराकरण हो सकता है। मूल बात यह है कि नई व्यवस्था में हर व्यक्ति को भागीदार बना लोक–शक्ति को लोक–हित में लगाने का एक बड़ा महत्वपूर्ण प्रयोग किया गया है, जो देश में अपनी तरह का पहला प्रयोग है।

क्या यह प्रयोग सफल होगा, यह प्रश्न कई लोगों के मन में उठ सकता है। यह तो बहुत हद तक वातावरण पर निर्भर करेगा कि

पिछले चार–पांच वर्षों में ही काफी बदलाव आया है जब कि ग्राम सभा अभी सशक्त रूप से काम कर भी नहीं रही हैं। जो घूंघट में आती थीं, अब वे अन्य स्त्रियों की तरह खुले चेहरे आ रही हैं; जातिगत भेदभाव के कारण जो लोग अलग–अलग बैठते थे, अब वे साथ बैठ रहे हैं। ये सब बड़ी उपलब्धियां हैं।

ग्राम सभा कितने नियमित रूप से कार्य करती है, उसमें उपस्थिति कैसी रहती है, समितियां किस प्रकार कार्य करती हैं, आय–स्रोतों को बढ़ाने में लोग कहां तक साथ देते हैं, सहकारी कर्मचारियों का कहां तक सहयोग मिलता है, विभिन्न राजनीतिक दलों की कैसी प्रतिक्रिया होनी है, सरकार की अपनी प्रतिबद्धता कैसी बनी रहती है आदि। जनतंत्र में सरकारें तो बदलती रहती हैं। श्री दिग्विजय सिंह के नेतृत्व में बनी सरकार ने व्यवस्था प्रारंभ की है। व्यवस्था को जड़ पकड़ने में समय लगेगा। उसे आगे की सरकारों का कम से कम बीस–पचीस वर्षों तक पूरा सहयोग और समर्थन मिलते रहना चाहिए। बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका होने जा रही है, आम लोगों की अपनी। यदि वे जाग्रत और संगठित रहेंगे तो सारी शक्तियां पक्ष में रहेंगी और व्यवस्था स्वस्थ रूप से चलेगी।

अपने देश के शाश्वत मूल्यों (सत्यनिष्ठा, पारस्परिक सदभाव और सहयोग, परिवार में सामंजस्य आदि) को बचाते और बढ़ाते हुए,

हमें अपने गांवों को यथा–संभव आत्मनिर्भर और आधुनिक बनाना है। कृषि और उद्योग के सहारे, रोजगार के अवसर बढ़ाये जा सकते हैं। बिजली, आवागमन के साधन, टेलिफोन, टी.वी. शिक्षा का अच्छा प्रबन्ध, स्वास्थ्य सेवा, मनोरंजन के साधन, आधुनिक जीवन की आवश्यकताएं हैं। उनके न होने से गांवों से पलायन नहीं रुकेगा और इसका प्रतिकूल प्रभाव शहरों पर पड़ेगा। इसं विकास कार्य में जहां आम लोगों की अपनी भूमिका हैं, वहीं गावों का आधुनिकीकरण केन्द्रीय और राज्य सरकार के पूर्ण सहयोग के बिना असंभव है। अतएव, ग्राम–सभा को कानूनी रूप से सबल बना देना, पर्याप्त नहीं है। संघीय शासन प्रणाली के अंतर्गत केन्द्र और राज्य सरकार के दायित्व किसी प्रकार कम नहीं होते हैं। ग्राम–सभा तभी सफल होगी और ग्राम–स्वराज तभी व्यावहारिक रूप लेगा जब उसके माध्यम से लोग सुखी होंगे और यह बहुत कुछ निर्भर करता है केन्द्र और राज्य की नीतियों पर जिनका तत्क्षण व्यापक प्रभाव पड़ता है।

गांव, राज्य और देश के आम लोग कैसे जाग्रत हों और जाग्रत बने रहें, यह आज की सबसे बड़ी राजनीतिक–सामाजिक चुनौती है। जो सत्ता–सुख भोग रहे हैं वे कभी नहीं चाहेंगे कि आम लोग जाग्रत हों, वे शिक्षित हों, एक हों, आर्थिक दृष्टि से संपन्न बने, सामाजिक दृष्टि से ऊपर उठें और नया जीवन पावें। सत्ता–सुखी विशिष्ट लोग (जिसमें सभी दलों, वर्गों, व्यवसायों, जातियों, धर्मों के लोग हैं) लुभावने नारों, झूठे आश्वासनों (जानते हुए कि आश्वासन झूठे हैं) लोगों का भटकाते और बांट कर रखते हुए, सत्ता–सुख भोगने के आदी बन चुके हैं। वे कभी पंचायती व्यवस्था को सशक्त होने देना नहीं चाहेंगे। ऊपर से समर्थन देते हुए, भीतर से उसे कुरेदेंगे, कमजोर बनाएंगे ताकि जनता का अपने पर से ही विश्वास उठ जाये वे हमेशा किसी के "मा–बाप" और "मसीहा" बन कर आने की प्रतीक्षा करते रहें और वंचित और आश्रित बने रहें।

यह देश का बड़ा संकट है। आम लोगों को इसे पहचानना है। बुद्धिजीवियों, सामाजिक कार्यकर्त्ताओं, किसानों, मजदूरों, अपढ़ों, वंचित वर्गों, युवकों और महिलाओं के हित में कार्य करने वाले संगठनों के सामने चुनौती है कि वे लोगों के बीच विश्वास पैदा करें, उनमें उत्साह भरें और उन्हें उत्तरदायी नागरिक बनने में उनकी मदद करें। मीडिया बड़ा प्रभावकारी है। विफलताओं का निरपेक्ष विश्लेषण और सफलता की कहानियों को उजागर कर, लोगों में आत्म–निर्भरता बढ़ा कर; वह नई व्यवस्था को सशक्त बनाने में सकारात्मक भूमिका अदा कर सकता है।

शिक्षा जरूरी

अपने उत्तरदायित्वों को निभाने के लिए गांव के लोगों का शिक्षण–प्रशिक्षण बड़ा आवश्यक है। निरक्षरता उन्मूलन अभियान चल रहा है; प्रयास होना चाहिए कि वह शीघ्र पूरा हो। गांव के सभी बच्चे–बच्चियां अवश्य स्कूल जाएं और कम से कम आठवें दर्जे तक की शिक्षा प्राप्त करें। लोगों को नए बीजों की जानकारी चाहिए; पानी का प्रयोग और प्रबंध कैसे किया जाए कि पीने के लिए स्वच्छ पानी मिले और पानी बेकार नहीं रहे; भूमि की गुणवत्ता और जलवायु के अनुसार जलावन, लकड़ी और फल के कौन से पेड़ लगाये जाएं, जानवरों के लिए चारा कैसे उपजाया जाए; घर बनाने के लिए मशीन से ईंट कैसे बनाई जाए, आदि जैसे दिन–प्रतिदिन के विषयों पर तकनीकी जानकारी जरूरी होगी। लोगों को जानकारी चाहिए कि संक्रामक रोगों से कैसे बचा जाए; बाढ़, आग, भूंकप जैसी आपदाओं के समय कैसे हिफाजत की जाए; असामाजिक तत्वों से बचने के लिए क्या उपाय किए जाएं; गांव में किस तरह के छोटे–मोटे उद्योग लगाए जाएं और उनकी बिक्री की क्या व्यवस्था की जाए ओर जो उद्योग चल रहे हैं उनकी गुणवत्ता कैसे बढ़ाई जाए – ये सब प्रश्न प्रासंगिक और सामयिक हैं। कानूनों का सामान्य ज्ञान, ग्राम सभा और पंचायतों से सम्बद्ध जो कानून–नियम हैं इनकी जानकारी सभी लोगों को रहनी चाहिए। शिक्षण–प्रशिक्षण जितने नियमित और गहन रूप में होंगे, ग्राम विकास में उतनी ही मदद मिलेगी और तब गांव विकसित होने लगेंगे, लोगों में आत्म–विश्वास आने लगेगा और उनकी आत्म–निर्भरता बढ़ने लगेगी। इस संदर्भ में हर गांव में पुस्तकालय–वाचनालय की आवश्यकता है जिसमें सरकारी और अन्य स्रोतों जैसे यूनिसेफ आदि से निःशुल्क वितरण के लिए निकलने वाले प्रकाशन उपलब्ध रहें। सार्वजनिक उपयोग के लिए हर पंचायत भवन/पुस्तकालय में रेडियो/टी.वी. रहें। बुनियादी ढाचे (सड़क निर्माण, बिजली की आपूर्ति, पोस्ट ऑफिस, टेलिफोन) आदि में सरकार की भूमिका महत्वपूर्ण है।

अन्ततः निर्णय तो समय देगा।

अभी समय ग्राम–स्वराज की परिकल्पना को साकार बनाने में समाज के सभी लोगों और सभी संस्थाओं को अपनी–अपनी भूमिका निभाने का है। ❑

लघुकथा

धान

महेन्द्र सिंह शेखावत 'उत्साही'

कांव–कांव–कांव...। बूढ़ी काकी के झोंपड़े के सामने पड़े मिट्टी के ढेर पर बैठ कर कौवा बोल रहा था।

कौवे की आवाज सुनते ही काकी बोली, 'उड़ जा रे कागा! कोई मेहमान आवे तो।'

यह सुन कर बूढ़ा काका हंस पड़ा – 'अरी, घर में तो अपने लिए ही धान नहीं हैं। कोई मेहमान आ गया तो उसे क्या खिलायेगी ?'

काकी आगे कुछ नहीं बोली। बस कौवे को देखती रह गई कि कौवा कहीं उड़ ना जाए! ❑

सार्थक है महिलाओं का आरक्षण

भारत डोगरा

वर्ष 1992 के संविधान (73वें संशोधन) अधिनियम ने पंचायती राज संस्थाओं के सभी स्तरों पर महिलाओं को एक–तिहाई आरक्षण देकर महिलाओं को नए अवसर देने का एक ऐसा कार्य किया जिसके महत्व को केवल राष्ट्रीय स्तर पर नहीं, विश्व स्तर पर भी स्वीकार किया गया है। इसे स्वाधीन भारत के सबसे सार्थक कदमों में से एक माना जा सकता है, पर साथ ही यह कहना भी जरूरी है कि यदि महिलाओं की हकदारी और सुरक्षा के अन्य कदम साथ–साथ नहीं उठाए गए तो इस आरक्षण से उत्पन्न संभावनाओं का उचित उपयोग नहीं हो पाएगा।

इस संशोधन से पहले भी जिन राज्यों (कर्नाटक, केरल, आंध्र प्रदेश, पश्चिम बंगाल) ने पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं का छिटपुट आरक्षण किया था, उसके सार्थक परिणाम सामने आने लगे थे। कर्नाटक के अनुभव के बारे में हुए अध्ययनों से पता चला था कि दो वर्षों के भीतर निर्वाचित महिलाओं ने अपनी आरंभिक झिझक छोड़ दी थी और वे खुल कर अपने विचार व्यक्त करने लगी थीं। आंध्र प्रदेश और पश्चिम बंगाल के अनुभव से पता चला कि महिलाएं पेयजल, स्कूल, अध्यापक की नियुक्ति, शराब की दुकान को बंद करवाने जैसी अपनी प्राथमिकताओं को असरदार ढंग से पंचायत में प्रस्तुत कर रही थीं। केरल में जिला स्तर के चुनावों के एक अध्ययन से पता चला कि निर्वाचित महिलाओं की संख्या आरक्षित स्थानों से कहीं अधिक थी। दूसरे शब्दों में, अनेक गैर–आरक्षित स्थानों में खुला चुनाव जीत कर भी महिलाएं आगे आई थीं।

इस उत्साहवर्धक अनुभव ने पूरे देश के स्तर पर पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण की भूमिका तैयार की। पांच लाख से ज्यादा गांवों और सौ करोड़ की आबादी वाले देश में इस तरह के कदम का निश्चय ही विश्व स्तरीय महत्व है और जब भी विश्व स्तर पर महिलाओं के

सशक्तीकरण की बात उठती है तो उस चर्चा में भारत के इस महत्वपूर्ण कदम को भी स्थान मिलता है। यह कदम ऐसे देश में उठाया गया जहां लंबे समय से महिलाओं की परिवार से बाहर की सामाजिक–राजनीतिक भूमिका सीमित रखी गई है। इस कारण इस पहल का महत्व और भी बढ़ जाता है।

महिलाओं की भूमिका

सविता बहन भरतसिद पसाया दाहोद जिले (गुजरात) की पंडरी पंचायत की सरपंच चुनी गईं। उन्होंने भ्रष्टाचार के विरुद्ध अभियान चलाया और यह प्रयास किया कि इंदिरा आवास योजना का लाभ उन्हीं को मिले जो वास्तव में इसके हकदार हैं। अपनी शिक्षा का उचित उपयोग कर उन्होंने इस अभियान में काफी सफलता भी प्राप्त की। एक नेता ने भ्रष्टाचार विरोधी अभियान को रोकने के लिए जोर डाला पर सविता बहन ने अपना कार्य जारी रखा। तब इस नेता ने उनके पति को झूठे मुकदमे में फंसाने का प्रयास किया। सविता बहन ने सारी स्थिति को ग्राम सभा तथा अधिकारियों के सामने रखा और सभी ने उन्हें तथा उनके पति को निर्दोष माना।

पांच लाख से ज्यादा गांवों और सौ करोड़ की आबादी वाले देश में इस तरह के कदम का निश्चय ही विश्व स्तरीय महत्व है और जब भी विश्व स्तर पर महिलाओं के सशक्तीकरण की बात उठती है तो उस चर्चा में भारत के इस महत्वपूर्ण कदम को भी स्थान मिलता है। यह कदम ऐसे देश में उठाया गया जहां लंबे समय से महिलाओं की परिवार से बाहर की सामाजिक–राजनीतिक भूमिका सीमित रखी गई है।

अनेक गांवों में जहां महिलाओं की परिवार से बाहर सामाजिक–राजनीतिक सक्रियता के विरुद्ध माहौल है, वहां विधवाओं की ऐसी सक्रियता को तो और भी कम स्वीकार किया जाता है। इसके बावजूद कुछ विधवाओं ने पंचायती राज संस्थाओं में निर्वाचित होकर बहुत सार्थक भूमिका निभाई है। हरियाणा के कोसली गांव में सरपंच उर्मिला यादव की ऐसी ही प्रेरणादायक भूमिका रही है। उन्होंने पेयजल की उचित व्यवस्था में तथा पंचायत की जमीन को अतिक्रमण से बचाने में सराहनीय कार्य किया। इतना ही नहीं, कुछ दुकानें बनवा कर और उन्हें किराये में देकर पंचायत की आय में भी वृद्धि की।

25–वर्षीय सुधा पटेल आखों से देख नहीं सकती हैं पर इसके बावजूद उन्होंने स्नातकोत्तर शिक्षा प्राप्त की तथा इसके बाद गुजरात के चंगा गांव (जिला आनन्द) की सरपंच निर्वाचित हुईं। अपनी एक मित्र की सहायता से कार्य करते हुए उन्होंने पेयजल और सड़क की व्यवस्था सुधारने जैसे कई सार्थक कार्य किए हैं।

निर्वाचित महिलाओं पर पारिवारिक दबाव

जहां एक ओर इस तरह के सार्थक कार्य के अनेक उदाहरण सामने आ रहे हैं, वहीं दूसरी ओर ऐसे उदाहरणों की भी कमी नहीं है जहां राजनीतिक महात्वाकांक्षा वाले पुरुष अपने परिवार की महिलाओं को अपनी निजी महत्वाकांक्षा की दौड़ का साधन या मुखौटा मात्र बनाना चाहते हैं। वे यह तो चाहते हैं कि आरक्षण का लाभ उठाकर उनके परिवार की महिला निर्वाचित हों, पर इसके आगे वे यह भी चाहते हैं कि निर्वाचित होने के बाद वे उनके दबदबे में, उनके कहे अनुसार काम करें ताकि धन अर्जन करने की या ऊंचा पद प्राप्त करने की उनकी अपनी इच्छा की संतुष्टि हो या उसकी भूमिका बन सके। अब यदि यह निर्वाचित महिला स्वयं इस गलत उद्देश्य को स्वीकार करती है तब तो दूसरी बात है पर यदि वह स्वतंत्र रूप से सार्थक कार्य करना चाहती है तो इस नियंत्रण से उसे बहुत घुटन होती है और उसे निरंतर यह गम सताता रहता है कि उससे अनुचित कार्य करवाया जा रहा है। गैर–कानूनी या भ्रष्टाचारी कार्य उसके नाम पर होगा तो बाद में उसे जेल जाना पड़ेगा या आम सजा भुगतनी पड़ेगी, यह तनाव भी उसे निरंतर परेशान करता रहता है। इस स्थिति में निर्वाचित होना एक ऐसी अनचाही मुसीबत बन जाती है, जो उस पर पुरुष–प्रधान समाज ने चालाकी से जबरदस्ती थोप दी है। इस तरह की समस्याओं का कोई सरल और फौरी हल नहीं हैं। वे तभी कम होंगी जब आरक्षण से आगे निकलकर महिलाओं की बराबरी और हकदारी की बात समाज में अधिक से अधिक मान्यता प्राप्त करेगी।

25–वर्षीय सुधा पटेल आखों से देख नहीं सकती हैं पर इसके बावजूद उन्होंने स्नातकोत्तर शिक्षा प्राप्त की तथा इसके बाद गुजरात के चंगा गांव (जिला आनन्द) की सरपंच निर्वाचित हुईं। अपनी एक मित्र की सहायता से कार्य करते हुए उन्होंने पेयजल और सड़क की व्यवस्था सुधारने जैसे कई सार्थक कार्य किए हैं।

सार्थक सामाजिक बदलाव जरूरी

किन्तु एक दूसरी तरह की समस्या भी अनेक गांवों में उपस्थित हुई है जहां निर्वाचित महिला को अपने परिवार का तो समर्थन मिला है पर गांव के कुछ अन्य शक्तिशाली लोगों ने उसे तरह–तरह से परेशान किया है। इस तरह के अधिकांश मामलों में जिन निर्वाचित महिलाओं को अधिक परेशान किया गया है, वे प्रायः दलित समुदाय की हैं। कई बार उन्हें परेशान करने के साथ–साथ उनके पति या परिवार के अन्य सदस्यों का भी उत्पीड़न किया गया। मध्य प्रदेश के टीकमगढ़ जिले में एक दलित महिला सरपंच को उसके पति के साथ मारा–पीटा गया, फिर दोनों को कहीं ले जाकर एक कमरे में बंद कर दिया गया ताकि

(शेष पृष्ठ 16 पर)

पंचायती राज और महिलाएं

डा. लक्ष्मी रानी कुलश्रेष्ठ*

लोकतंत्र की निम्नतम इकाई पंचायत है और स्थानीय स्वशासन में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका है। पंचायती राज भारत के लिए नई उपलब्धि नहीं है। प्राचीन काल में हमारे देश में इसकी सशक्त परंपरा रही है। इसी की पुनर्स्थापना भारतीय गणतंत्र की उपलब्धि है। स्वतंत्रता–पूर्व से ही महात्मा गांधी ने पंचायती राज व्यवस्था के माध्यम से पिछड़े हुए वर्गों के हाथों में सत्ता सौंपने की कल्पना की थी। स्वतंत्रता के पश्चात् पंचायती राज व्यवस्था लागू करने के लिए विभिन्न मुद्दों पर विशेषज्ञों द्वारा विचार–विमर्श के आधार पर सामुदायिक विकास तथा पंचायती राज व्यवस्था लागू करने का फैसला किया गया। 1955 में गठित बलवंतराय मेहता समिति की सिफारिशों के आधार पर पंचायती राज व्यवस्था शुरू की गई लेकिन ये अपने कार्यों तथा उद्देश्यों को पूर्ण करने में असफल रही। सत्ता पिछड़े वर्गों के बजाय गांव के उच्च और खास वर्गों के हाथों में चली गई। कालान्तर में सत्ता का विकेन्द्रीकरण करके सही अर्थों में पिछड़े वर्ग को भागीदार बनाने का निश्चय किया गया। अप्रैल 1993 में 73वां और 74वां संविधान संशोधन विधेयक पारित करके महिलाओं को पंचायतों तथा नगर निकायों में एक तिहाई स्थान आरक्षित करके मूल स्तर पर राजनैतिक सत्ता में उनकी भागीदारी सुनिश्चित कर दी गई। आज इसके परिणाम हमारे समाने हैं।

निर्वाचित महिलाओं में बदलाव के संकेत

ग्रामीण क्षेत्रों के दूर दराज के गांवों की नारियों ने घूंघट की ओट से बाहर निकलकर पहले तो चुनावों में हिस्सा लिया और अब ग्राम प्रधान, क्षेत्र समिति प्रमुख, जिला पंचायत अध्यक्ष, नगर अध्यक्ष तथा नगर प्रमुख के पदों पर निर्वाचित होकर वे अत्यंत कुशलता के साथ कामकाज चला रही हैं। यद्यपि इनमें से अधिकांश को कानूनी दांव–पेंच नही आते। उन्हें तकनीकी रूप से गढ़े गए नियमों–विधानों की जानकारी नहीं है, लेकिन वे जानती हैं कि किफायत के साथ धन किस प्रकार खर्च किया जाता है और गांव की ईंधन बीनने वाली, कोसों दूर से पानी भरकर लाने वाली तथा शिक्षा–दीक्षा के अभाव में निपट गंवार बनकर जीवन व्यतीत करने वाली महिलाओं का दुःख दर्द क्या है और इसका स्थायी समाधान किस प्रकार से हो सकता है। विविध विभागों से जुड़ने और उनके कामकाज में निर्णायक भूमिका निभाने से ग्रामीण महिलाओं के लिये ज्ञान के कपाट खुले रहे हैं, उनकी सामाजिक स्थिति में भी जो विभेद और विसंगति है, उसमें भी सुधार आ रहा है। पंचायती राज के शुरुआती दौर में पंचायतों के संचालन की बागडोर किसी न किसी पुरुष के हाथ में थी, लेकिन अब महिलाओं की मनःस्थिति बदल रही है। वे सब अपना पक्ष पूरी निर्भीकता तथा निष्पक्षता से बैठकों में रखने लगी हैं। बहरहाल पंचायती राज व्यवस्था में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी से उन्हें जो नया परिवेश मिल रहा है, वह उनके लिये प्रगति और विकास के द्वार तो खोल ही रहा है, पुरुष तथा स्त्री के बीच समाज में जो सामाजिक विषमता है, उसमें भी कमी हो रही है। राजनीतिक सत्ता पर काबिज होने के साथ महिलाएं धीरे–धीरे स्वावलंबी होती जा रही हैं। पंचायत अधिनियम के लागू होने से पूर्व यह आशंका व्यक्त की गई थी कि इतनी सारी महिलाएं मिलेंगी कहां से? परंपराओं का निर्वाह करने वाली नारी यकायक पंचायती मंच पर जुबान कैसे खोलेगी? अफसरशाही

पंचायती राज में बढ़ती महिलाओं की भागीदारी से उनमें जबर्दस्त जागरूकता आई है

* अध्यक्ष : अर्थशास्त्र एवं प्रबंधन विभाग, समाज विज्ञान संकाय, दयालबाग एजूकेशन इन्स्टीट्यूट, आगरा

के सामने गांव की समस्याएं किस प्रकार रखेगी तथा किस प्रकार इन समस्याओं का समाधान करेगी। लेकिन पिछले दो चुनावों में प्रत्येक जाति और वर्ग की महिलाओं में जबर्दस्त चुनावी प्रतिस्पर्धा देखी गई है। पंचायती राज संस्थाओं और स्थानीय निकायों में उनकी भागीदारी से जो मार्ग प्रशस्त हुआ है, वह अन्ततः संसद एवं विधानसभाओं में उनकी 33 प्रतिशत सुनिश्चित भागीदारी के साथ ही समाप्त होगा।

नारी शक्ति के उत्कर्ष का प्रयास

भारत के सामाजिक और आर्थिक ढांचे में शताब्दियों से कुछ वर्ग दबे, कुचले तथा शोषित रहे हैं जिनका शोषण सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक दृष्टि से शक्तिशाली वर्गों के लोगों द्वारा किया जाता रहा है। हरिजन तथा पिछड़ी कही जाने वाली जातियों के साथ-साथ भारतीय नारी को भी शोषितों के वर्ग में ही रखा जाना अधिक तर्कसंगत प्रतीत होता है। आर्थिक, राजनीतिक तथा सामाजिक रूप से सशक्त लोगों ने यदि अनुसूचित जातियों/जनजातियों तथा पिछड़ी जाति के लोगों का शोषण किया है तो सम्पूर्ण पुरुष-वर्ग ने नारी को भोग की वस्तु समझकर एक सोची समझी रणनीति के तहत उन्हें नैसर्गिक अधिकारों से वंचित करके वे सारे रास्ते बन्द कर दिए जो बौद्धिक विकास का मार्ग प्रशस्त करके उन्हें आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक दृष्टि से अधिक सजग एवं स्वावलम्बी बना सकते थे।

महिलाओं के लिए स्थानीय स्वशासन में आरक्षण बहुत सोच-समझकर उठाया गया कदम है। ग्रामीण समाज में महिलाएं काफी पिछड़ी हुई हैं और पुरुष-वर्ग उन पर हावी है, यद्यपि ग्रामीण अर्थतंत्र में महिलाओं का योगदान पुरुषों से कम नहीं है। पारित विधेयक में इसी असंगति को दूर करने का प्रयास किया गया है। इससे महिलाओं में एक नई जागृति आएगी, उनमें अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता उत्पन्न होगी, फलस्वरूप गांवों में नारी शक्ति का उत्कर्ष होगा।

प्रयास संतोषजनक नहीं रहा

अपने देश की राजनीति में महिलाओं की भागीदारी की अब तक की स्थिति का विश्लेषण करें तो कुल मिलाकर सत्ता में उनकी भागीदारी बढ़ाने हेतु किए गए प्रयासों को किसी भी परिस्थिति में संतोषजनक कहना बेईमानी होगा। इसके कई आधार हैं :

- पिछले दो चुनावों में एक तिहाई आरक्षण का एक नकारात्मक पक्ष यह रहा है कि महिलाएं अधिकांशतः आरक्षित स्थानों पर ही चुनाव मैदान में आई हैं, तथा सामान्य वर्ग की सीटों को स्वतः ही पुरुषों के लिए आरक्षित मान लिया गया है। महिला चुनाव क्षेत्रों का निर्धारण निश्चित मानदण्डों के आधार पर नहीं हुआ, यह सत्तारूढ़ दलों के लाभ को दृष्टि में रखकर किया गया।
- स्थानीय संस्थाओं में यह प्रयोग उन लोगों पर किया जा रहा है जो निरक्षर और निर्धन हैं, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष तौर पर हिंसा के शिकार हैं जिनका केवल 29 प्रतिशत आर्थिक कार्यों में संलग्न है तथा आर्थिक रूप से जिनकी सौदा करने की शक्ति अत्यन्त कमजोर है।
- यह बात निर्मूल सिद्ध हुई है कि महिलाएं स्वतः ही निर्णय प्रक्रिया में भाग लेने लगेंगी लेकिन महिलाएं त्रिस्तरीय प्रणाली में नेतृत्व विकसित करने में असमर्थ रही हैं। वे अपने क्षेत्रों के विकास कार्यों हेतु अपने परिवार के पुरुषों या सरकारी अधिकारियों पर निर्भर रही हैं।
- अनेक महिलाओं ने यह भय प्रकट किया है कि पंचायतों में उनकी भागीदारी से उनके घरेलू दायित्वों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा, निर्धन महिलाओं को कार्य तथा मजदूरी की हानि उठानी पड़ेगी और इसकी क्षतिपूर्ति की व्यवस्था इस प्रणाली में नहीं है।
- अनुभवों से यह स्पष्ट होता है कि महिला प्रतिनिधियों का झुकाव लिंग की अपेक्षा जाति की ओर रहा है। पंचायतों में महिलाओं का प्रतिनिधित्व यद्यपि स्वागत-योग्य कदम है लेकिन यह आशा करना व्यर्थ है कि यह व्यवस्था जाति समीकरणों में परिवर्तन लाकर सत्ता का झुकाव समाज के कमजोर वर्ग के पक्ष में करेगी।
- निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों का भविष्य आज भी उनकी सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि से प्रभावित है। इसका कारण निम्न जाति की महिलाएं उच्च जाति की महिला सदस्यों के साथ बैठने तथा उनकी इच्छा के विरुद्ध जाने में संकोच करती हैं।
- महिला पंचों तथा सरपंचों की प्रभावी भूमिका के विरुद्ध समाज का दबाव प्राचीन काल से ही रहा है। ग्रामीण समाज आज भी इस परंपरा को नहीं तोड़ सका है। अनेक उदाहरण देखे जा सकते हैं जिनमें मुखर महिला स्वरों को पुरुषों द्वारा दबा दिया गया है। वास्तव में आरक्षण की व्यवस्था का दुरुपयोग पुरुष-प्रधान समाज द्वारा ही किया जा रहा है। चुनाव मैदान में अधिकांशतः उन्हीं महिलाओं को उतारा गया है जो पुरुषों के अधीन रहकर तथा उनके मार्ग-दर्शन पर निर्भर रहकर कार्य करें।
- यह भी देखा गया है कि चुनाव-क्षेत्रों का निर्धारण होने के पश्चात् महिला उम्मीदवारों का चयन जाति के आधार पर किया जाता है। अनेक पढ़ी-लिखी तथा राजनीतिक रूप से जागरूक महिलाओं की यह शिकायत रही है कि नामांकन में उनकी उपेक्षा की गई अथवा उन्हें चुनावों में हराया गया। स्पष्टतः लोकतांत्रिक प्रक्रिया गांव स्तर पर अभी भी उन महिलाओं को स्वीकार करने में असमर्थ है जो शिक्षित एवं जागरूक हैं तथा जो पुरुषों की अधीनता में रहकर कार्य नहीं करना चाहतीं।
- पंचायती राज में महिलाओं के लिये सीटों का आरक्षण अस्थायी है, प्रायः यह देखा गया है कि महिलाएं इन स्थानों को अगले चुनावों तक अथवा सीटों के अनारक्षित होने तक अपने परिवार के पुरुषों के लिए सुरक्षित रखती हैं।
- पंचायती राज में जाति पंचायतों की भूमिका भी महत्वपूर्ण रही है। जाति के बुजुर्ग जो अपनी जाति परंपराओं को सुरक्षित रखना चाहते हैं, अपनी जाति की उन महिला सदस्यों का उत्पीड़न कर सकते हैं जो सामाजिक बुराइयों के विरुद्ध आवाज उठाती हैं। राज्य स्तर पर किए गए अनेक अध्ययनों से यह बात सामने आई है कि महिलाएं स्वतंत्र रूप से आवाज उठाने में असमर्थ रही हैं।
- यह भी देखा गया है कि पंचायतों के माध्यम से उनके ससुर, पति या अन्य पुरुष रिश्तेदार पंचायतों के कार्य में दखल

देते हैं। इससे संविधान के इस प्रावधान की आत्मा का ही हनन होता है। इतना ही नहीं, महिलाओं में कार्य–क्षमता की कमी भी पंचायती संस्थाओं के क्रियान्वयन में एक बड़ी बाधा बनकर उभरी है।

- यह भी देखा गया है कि पंचायत के पुरुष सदस्य उन्हें बैठक में नहीं बुलाते और उनके घर पर जाकर ही रजिस्टर पर हस्ताक्षर कराके उनकी उपस्थिति दर्ज करा लेते हैं। अनेक महिला प्रतिनिधियों ने भी यह स्वीकार किया है कि अपने गृह कार्यों को प्राथमिकता देने के कारण पंचायतों के क्रियाकलापों की जानकारी रखना उनके लिए मायने नहीं रखता। उनकी रुचि केवल पंचायत सदस्यों को मिलने वाले विशेषाधिकारों में ही अधिक रही है।

महिलाओं की भूमिका प्रभावी बनाने के उपाय

पंचायती राज में महिलाओं की भूमिका के संबंध में तीन बातों की ओर ध्यान आकर्षित करना आवश्यक है। सबसे पहले शिक्षा और प्रशिक्षण है। शिक्षा का अभाव उनके आत्म–विकास और आत्म–सम्मान में सबसे बड़ी बाधा रहा है। यद्यपि सरकार के प्रयासों के फलस्वरूप पिछले पांच दशकों में महिला साक्षरता बढ़ी है फिर भी अभी उनमें शिक्षा का स्तर निम्न है। देश की सम्पूर्ण महिलाओं का 74 प्रतिशत भाग गांवों में बसता है लेकिन लगभग 18 प्रतिशत ग्रामीण महिलाएं ही शिक्षित हैं। इसके अनेक कारण रहे हैं यथा महिला शिक्षा के प्रति जनजागरण की कमी, बालिकाओं पर घरेलू कार्यों की जिम्मेदारी होने के कारण स्कूल नामांकन का अभाव, अल्पायु में विवाह आदि।

संविधान संशोधन द्वारा महिलाओं को अधिकार–सम्पन्न तो बना दिया गया है परन्तु उनकी अधिकार–सम्पन्नता के परिणाम तभी दृष्टिगोचर होंगे जब उन्हें ग्रामीण विकास तथा महिला विकास के प्रति जागरूक बनाया जाएगा। अतः पंचायतों का प्रमुख और प्रथम दायित्व शिक्षा और प्रशिक्षण का है। महिलाओं को उनके अधिकारों तथा दायित्वों का समुचित ज्ञान दिलाया जाए ताकि वे इन अवसरों का समुचित लाभ उठा सकें। ग्राम पंचायतों में निर्वाचित महिलाओं के लिए स्थानीय प्रशिक्षण शिविर लगाकर उन्हें विकास के विविध पहलुओं से परिचित कराया जाए तथा उन्हें उनके अधिकारों और कर्त्तव्यों की जानकारी दी जाए ताकि वे पुरुषों के साथ कदम से कदम मिलाकर चल पाएं तथा राष्ट्रीय विकास की मुख्य–धारा में जुड़ सकें। ग्रामीण विकास मंत्रालय ने पंचायती राज कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण और शिक्षण के लिए इन्दिरा गांधी खुला विश्वविद्यालय की सेवाएं ली हैं। यह प्रशिक्षण कार्यक्रम दूरवर्ती शिक्षा पद्धति से दिया जा रहा है। राष्ट्रीय ग्रामीण विकास संस्थान, हैदराबाद ने विभिन्न श्रेणी के पंचायत कर्मियों की प्रशिक्षण प्रणाली में एकरूपता लाने के लिए प्रशिक्षण मोड्यूल तैयार किया है। अनेक राज्यों में भी निर्वाचित प्रतिनिधियों के लिए व्यापक प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रारंभ किए गए हैं।

अब महिलाओं की मनःस्थिति बदल रही है। वे सब अपना पक्ष पूरी निर्भीकता तथा निष्पक्षता से बैठकों में रखने लगी हैं। बहरहाल पंचायती राज व्यवस्था में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी से उन्हें जो नया परिवेश मिल रहा है, वह उनके लिये प्रगति और विकास के द्वार तो खोल ही रहा है, पुरुष तथा स्त्री के बीच समाज में जो सामाजिक विषमता है, उसमें भी कमी हो रही है।

अनुसूचित जाति/जनजाति और महिला प्रतिनिधियों के प्रशिक्षण को विशेष रूप से प्राथमिकता दी जा रही है। शिक्षा और प्रशिक्षण पंचायती राज की सफलता हेतु प्रथम आवश्यकता है। बिना शिक्षा और प्रशिक्षण के इस संविधान संशोधन का लाभ महिला वर्ग को नहीं मिल सकता। शिक्षा से ही उन्हें योग्यता, सामर्थ्य और साहस मिल सकेगा। वे यह जान सकेंगी कि कैसे जिम्मेदार पदों पर रहकर नीति का निर्धारण एवं क्रियान्वयन किया जा सकता है। पंचायतों द्वारा महिला अधिकारियों के प्रशिक्षण की पूर्ण व्यवस्था होनी चाहिए तकि वे कार्यालय की व्यवस्था में भी दक्ष हो सकें। जनप्रतिनिधियों को अपने क्षेत्र के राजनीतिक एवं सामाजिक परिदृश्य की जानकारी होना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि नियोजन, बजट, संसदीय प्रणाली आदि की जानकारी होना भी आवश्यक है। अशिक्षित व्यक्ति कितना ही बुद्धिमान क्यों न हो, लेकिन आवश्यक जानकारी के अभाव में उपुयक्त अधिकारियों तथा विभिन्न विकास योजनाओं के क्रियान्वयन हेतु इंचार्ज व्यक्तियों से सम्पर्क नहीं कर सकता। शिक्षा व्यक्ति को उचित कार्य उचित स्थान पर उचित तरीके से करना सिखाती है।

दूसरी महत्वपूर्ण आवश्यकता महिलाओं की आर्थिक स्वतंत्रता है। वर्तमान में ग्रामीण परिवारों में सबसे अधिक श्रम महिला को करना होता है, परन्तु उसका श्रम पूर्णतः अवैतनिक होता है तथा सुबह से देर रात तक घर और खेती के कार्यों में जूझती महिला के श्रम का अधिकांश फल पुरुष वर्ग ही भोगता है। पति को परमेश्वर मानने तथा पति पर आश्रित रहने की प्रथा ने महिलाओं की आत्म–चेतना को आच्छादित कर रखा है। शिक्षा के द्वारा तथा व्यावसायिक स्वतंत्रता से ही इस कुप्रथा का अंत संभव है। आवश्यकता इस बात की है कि महिलाओं के श्रम का उचित मूल्यांकन हो ताकि उनके श्रम का सही प्रतिफल उन्हें मिल सके।

पंचायत के क्रियाकलापों की तीसरी महत्वपूर्ण आवश्यकता स्वास्थ्य है। यद्यपि सरकार ने स्वास्थ्य सुविधाओं का पर्याप्त प्रसार किया है, परन्तु अशिक्षा, परंपरावादी विचारों एवं जागरूकता की कमी के कारण मातृत्व मृत्युदर अभी भी प्रति लाख जीवित जन्मों पर पांच सौ आंकी गई है। बिहार, मध्य प्रदेश, असम और उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में यह दर हजारों की संख्या में है। इसको कम करने का भरसक प्रयास करना होगा तथा महिलाओं को आगे आकर इन सेवाओं का लाभ प्राप्त करना होगा। उन्हें स्वयं अपना उद्धार करना होगा।

निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों की पंचायती राज में सक्रिय भूमिका हेतु परिवार की भूमिका पर विचार करना होगा। जाति और वर्ग से परे एक संस्था के रूप में परिवार शक्ति, सत्ता एवं संसाधनों का आवंटन पक्षपातपूर्ण तरीके से करता है। यह महिलाओं के हित में नहीं होता। यदि परिवार स्तर पर महिलाओं की इस नई भूमिका का स्वागत नहीं किया गया

तो पारिवारिक तनाव उत्पन्न हो सकते हैं।

राजनीतिक दलों पर यह दबाव बनाना होगा कि वे चुनावों में तथा राजनीतिक कार्यकारिणियों में महिलाओं को अधिकाधिक अवसर प्रदान करें। चुनाव में उतरने वाली महिलाओं को हर संभव प्रशिक्षण, प्रचार–तकनीक जैसे प्रोत्साहन प्रदान किए जाएं। जनतांत्रिक निकायों में सत्ता संचालन हेतु निर्वाचित प्रतिनिधियों को जनतांत्रिक मूल्यों और सिद्धान्तों के अनुरूप कार्य करने का प्रशिक्षण देना होगा ताकि वे अपनी भूमिका तथा दायित्वों का निर्वाह भली प्रकार कर सकें। उन्हें कानूनी साक्षरता भी प्रदान करनी होगी। राजनीतिक दल संवेदनशील मुद्दों पर भी राजनीतिक प्रशिक्षण दे सकते हैं।

महिलाओं को पंचायती राज व्यवस्था में प्रभावी भूमिका निभाने में गैर सरकारी संगठन भी सक्रिय भूमिका निभा सकते हैं। ये स्थानीय निकायों में प्रत्येक पद के अनुरूप सर्वाधिक उपयुक्त महिलाओं की पहचान करके चुनाव में उनकी मदद कर सकते हैं, महिला संबंधी मुद्दों पर निर्वाचित सदस्यों के पक्ष में लाबी बना सकते हैं और भावी महिला नेतृत्व को प्रशिक्षण भी प्रदान कर सकते हैं। जनसंचार माध्यम भी पंचायतों में महिला भागीदारी के अच्छे उदाहरण और अनुभव प्रस्तुत करके सकारात्मक भूमिका निभा सकते हैं। महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी को वास्तविक स्वरूप प्रदान करने हेतु गैर सरकारी संगठनों, सरकार, राजनीतिक दलों, महिला समूहों इत्यादि को एक साथ कार्य करना होगा तथा आने वाले वर्षों में एक बहुआयामी रणनीति अपनानी होगी।

त्रिस्तरीय पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी निर्धारित करना ही समय की मांग नहीं है बल्कि सत्ता के सभी स्तरों पर आधा दायित्व उन्हें सौंपना होगा, आर्थिक, प्रशासनिक, न्यायिक तथा विकास क्षेत्रों में उनकी 50 प्रतिशत भागीदारी सुनिश्चित करने हेतु सभी स्तरों पर व्यापक प्रयास करने होंगे तथा समाज की सम्पूर्ण सोच, रवैये एवं पूर्वाग्रहों में बदलाव लाना होगा। नीति–निर्धारण से लेकर क्रियान्वयन तक के विभिन्न पहलुओं पर निष्ठापूर्वक अमल करके ही इस चुनौती का सही प्रकार सामना किया जा सकता है।

इसमें संदेह नहीं कि ग्रामीण गणतंत्र पुनर्जीवित हुए हैं लेकिन ग्राम स्वराज की अवधारणा में अभी समय लगेगा। यदि देश को समृद्ध बनाना है तो गांवों को समृद्ध बनाना होगा, और यह समृद्धि तभी आ सकती है जब लोग अपनी प्राथमिकताओं का निर्धारण स्वयं करें। वस्तुतः महिलाओं द्वारा शासन में यथावत भाग लेने से मितव्ययिता, सुशासन, ईमानदारी, भ्रष्टाचार उन्मूलन, निष्ठा, लगन, उत्तरदायित्व आदि मूल्यों का आना संभव है। आशा है कि इस संविधान संशोधन की भावना का आदर किया जाएगा और वांछित सुधार लाए जाएंगे। यह देश के पुनर्निर्माण में महत्वपूर्ण कदम होगा।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि पंचायती राज व्यवस्था यद्यपि महिलाओं को भागीदारी के अवसर तो प्रदान करती है लेकिन समान अवसर प्राप्त करने हेतु उन्हें अभी संघर्षों की लम्बी यात्रा तय करनी होगी। ❑

(पृष्ठ 12 का शेष) सार्थक है महिलाओं का.....

महिला सरपंच के विरुद्ध षडयंत्र से लाए गए अविश्वास प्रस्ताव के समय वह उपस्थित भी न रह सकें। राजस्थान में अनुसूचित जनजाति की एक महिला सरपंच स्वतंत्रता दिवस मनाने की तैयारी कर रही थी और इस अवसर के लिए उन्होंने मिठाई भी मंगवाई थी। दौसा जिले के इस पंचायत क्षेत्र में सवर्ण पुरुषों ने महिला सरपंच को झंडा लहराने से रोक दिया। शालीनता और सभ्यता की सब सीमाओं को तोड़ते हुए उन्होंने महिला सरपंच के वस्त्र उतार दिए। जो मिठाई स्वतंत्रता दिवस के लिए मंगवाई थी, उसे फैंक दिया गया। इस तरह की शर्मनाक वारदातें रोकने के लिए जरूरी है कि सभी अपराधियों के विरुद्ध तुरंत कार्यवाही की जाए और इतनी कड़ी सजा दी जाए कि फिर कोई निर्वाचित महिलाओं का अपमान करने की हिम्मत न कर सके।

इन वारदातों से यह भी स्पष्ट होता है कि महिलाओं की हकदारी के साथ–साथ दलितों, आदिवासियों आदि की हकदारी की बात करना कितना आवश्यक है। कुछ महिलाओं को आगे आने पर जो उत्पीड़न सहना पड़ा है, उसका दोहरा कारण है कि वह महिला भी है और दलित भी। जिस समाज पर सवर्ण पुरुषों की सत्ता चली आई है, उस समाज के सवर्ण पुरुष दलित महिला की सरपंची सह नहीं सकते हैं और उसे तंग करने, अपमानित करने या झूठे आरोपों में फंसाने के मौकों की तलाश में रहते हैं। अतः सार्थक सामाजिक बदलाव के पक्ष में जो लोग हैं उन सभी को दलित–आदिवासी निर्वाचित महिलाओं की सुरक्षा और सम्मान का विशेष ध्यान रखना चाहिए तथा सरकार को तो इसके लिए कड़े कदम उठाने ही चाहिए।

यह तो नही कहा जा सकता है कि सभी निर्वाचित महिला प्रतिनिधि ईमानदार होती हैं पर इतना जरूर कहा जा सकता है कि पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं के अधिक संख्या में आगमन के बाद ईमानदारी के कार्य की संभावनाएं बढ़ी हैं। यदि महत्वाकांक्षी पुरुषों के नियंत्रण से मुक्त होकर उन्हें आजादी से काम करने का माहौल मिले तो ये संभावनाएं और बढ़ेंगी। एक महत्वपूर्ण बात यह है कि महिलाओं को गांवों, कस्बों तथा मुहल्लों के स्तर में जितनी निर्णायक आवाज मिलेगी, उतनी ही इस बात की संभावना बढ़ेगी कि विकास के कुछ महत्वपूर्ण मुद्दों पर उपेक्षित वर्गों की ओर ध्यान दिया जाएगा। विकास की प्राथमिकताएं जो गड़बड़ हो गई हैं, उसे ठीक करने में महिलाओं की सशक्त भागीदारी से मदद मिलेगी। प्रायः देखा गया है कि विकास की प्राथमिकताओं के बारे में महिलाओं और पुरुषों की प्राथमिकताएं अलग होती हैं। महिलाएं टिकाऊ विकास, वन संरक्षण, पोषण, स्वास्थ्य, बाल–कल्याण, शौचालय तथा स्नानघर की उचित व्यवस्था, गांव की आत्म–निर्भरता, कुटीर उद्योगों आदि को प्रायः पुरुषों की अपेक्षा अधिक महत्व देती हैं। महिलाओं के विचार प्रायः खाद्य सुरक्षा तथा पर्यावरण संरक्षण जैसे महत्वपूर्ण उद्देश्यों की दृष्टि से अधिक सार्थक पाए गए हैं। अतः महिलाओं को पंचायती राज संस्थाओं में अधिक पद प्राप्त होने से विकास की कई विसंगतियां दूर करने में मदद मिल सकती है और ग्रामीण विकास की एक बेहतर समझ सामने आ सकती है। ❑

पंचायतों के माध्यम से विकेन्द्रीकरण : एक मूल्यांकन

डा. महीपाल

तिहत्तरवें संविधान अधिनियम को लागू हुए सात वर्ष हो चुके हैं। इस दौरान अधिकतर राज्यों में पंचायतों को कार्य करते हुए पांच वर्ष से अधिक समय बीत चुका है। मध्य प्रदेश, केरल, हिमाचल प्रदेश और उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में तो अधिनियम के लागू होने के बाद दूसरे पंचायत चुनाव भी सम्पन्न हो गए हैं। इसके अतिरिक्त पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों तक विस्तार) अधिनियम 1996 (विस्तार अधिनियम) को लागू हुए भी तीन वर्ष व्यतीत हो गए हैं। इस प्रकार पंचायती राज संस्थाओं के कार्यों का मूल्यांकन करने का यह उचित समय प्रतीत होता है। आइए देखें कि क्या इन संस्थाओं के चुनाव लगातार हो रहे हैं, कहां तक ये संस्थाएं स्वायत्तशासन की संस्थाएं बन कर उभरी हैं, विस्तार अधिनियम कहां तक जमीन पर उतरा है और इन संस्थाओं के सामने क्या कठिनाइयां आ रही हैं?

पंचायत चुनावों की स्थिति

73वें संविधान संशोधन से पहले पंचायतों के चुनाव राज्य सरकारों की इच्छा पर निर्भर थे। अक्सर जब–जब राज्य स्तर पर राजनैतिक तबदीली आई तभी–तभी सत्ता में आई राजनैतिक पार्टी ने लोगों को सत्ता देने की बात पर पंचायतों के चुनाव करा दिए। पश्चिम बंगाल अवश्य इसका अपवाद रहा क्योंकि वहां पर 1978 में जब से मार्क्सवादी सरकार सत्ता में आई तभी से लगातार पंचायतों के चुनाव हो रहे हैं। लेकिन 73वें संविधान संशोधन के बाद ऐसा माना जाता था कि पंचायतों के चुनाव हर पांच वर्ष के बाद होंगे और यदि किसी कारण से पंचायती राज संस्थाओं को भंग करना पड़ा तो छः महीने के भीतर दुबारा चुनाव हो जायेंगे। लेकिन व्यावहारिक रूप से ऐसा नहीं हुआ। गुजरात व पंजाब में आंशिक तौर पर पंचायतों के चुनाव सम्पन्न हुए। असम, अरुणाचल, आंध्र प्रदेश, बिहार, पांडिचेरी, अंडमान निकोबार द्वीप समूह, दादर एवं नागर

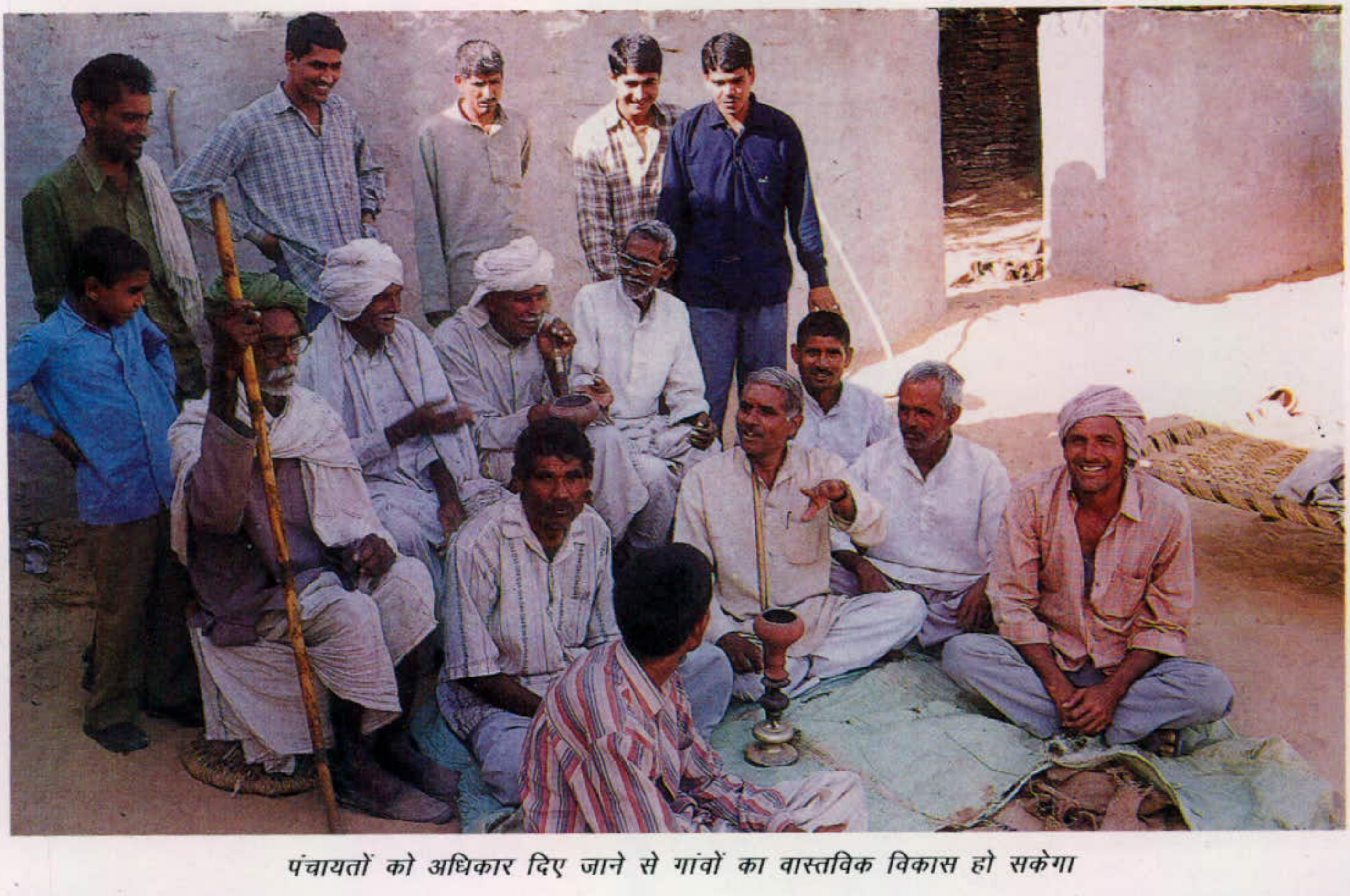

पंचायतों को अधिकार दिए जाने से गांवों का वास्तविक विकास हो सकेगा

हवेली, दमन व दीव और राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली में चुनाव अभी तक सम्पन्न नहीं हुए हैं। चुनाव न होने का कारण दलितों व पिछड़ों का आरक्षण और सूखे की समस्या बताई गई है।

कार्यात्मक, वित्तीय व प्रशासनिक शक्तियों का हस्तांतरण

पंचायतें कार्यात्मक, वित्तीय और प्रशासनिक स्वायत्तता मिलने के बाद ही लोगों की आकांक्षाओं को पूरा कर सकती हैं। आइये देखते हैं, विकेन्द्रीकृत शासन व प्रशासन के महत्वपूर्ण पहलू पर क्या स्थिति है। संविधान संशोधन की 11वीं अनुसूची में 29 विषय गिनाए हैं। ये विषय कृषि से लेकर सम्पत्तियों के रख–रखाव तक शामिल हैं। राज्य सरकारों के लिए आवश्यक था कि वे इन 29 विषयों को ध्यान में रख कर पंचायतों के तीनों स्तरों पर उनकी क्षमता को ध्यान में रखकर कार्यों का बंटवारा करतीं। योजना आयोग का नौवीं पंचवर्षीय योजना का मध्यावधि मूल्यांकन बताता है कि मध्य प्रदेश सरकार ने 18 विभागों के कार्य पंचायतों को सौंप दिए हैं। राजस्थान सरकार ने 1999 में नौ स्कीमें जो पहले डी. आर.डी.ए. द्वारा कार्यान्वित की जा रही थीं, जिला परिषद को सौंप दीं। हरियाणा सरकार ने भी 16 विभागों से संबंधित कुछ कार्य पंचायतों को सौंपे हैं। केरल राज्य में ग्रामीण विकास के लिए जन आयोजन अभियान चलाया गया है।

लेकिन कुछ राज्यों में पंचायती राज के समान्तर ऐसे कार्यक्रम शुरू कर दिए हैं जो पंचायतों की कार्यात्मक स्वायत्तता के विपरीत हैं। इस बारे में नौवी पंचवर्षीय योजना के मध्यावधि मूल्यांकन में ठीक ही कहा है कि ".... विकेन्द्रीकरण के क्षेत्र में आंध्र प्रदेश की राज्य सरकार "जन्मभूमि" परियोजना को मुख्य रूप से राज्य की नौकरशाही के माध्यम से कार्यान्वित कर रही है जो कि संविधान के 73वें संशोधन अधिनियम 1992 के विरुद्ध है।" हरियाणा में ग्रामीण विकास समितियों का गठन करना भी यह साबित करता है कि पंचायती राज संस्थाओं को सशक्त करने की बजाय समांतर संस्थाओं को बढ़ावा दिया जा रहा है।

पंचायतों को वित्तीय स्वायत्तता देने के क्षेत्र में भी प्रयास हुए हैं। सिक्किम और गोवा को छोड़कर, अन्य राज्यों के वित्त आयोगों ने अपनी अपनी रिपोर्ट राज्य सरकारों को सौंप दी है। कुछ राज्यों ने आयोगों की सिफारिश को पूर्णतया माना है, कुछ राज्यों ने आंशिक रूप से स्वीकार किया है, कुछ राज्यों ने अभी तक रिपोर्ट को विधान सभा के सम्मुख नहीं रखा है। इससे पता चलता है जैसा कि मध्यावधि मूल्यांकन ने आंका है कि राज्य वित्त आयोगों की रिपोर्टों पर अनेक राज्यों ने गम्भीरतापूर्वक ध्यान नहीं दिया है। राज्य वित्त आयोगों की सिफारिशों के अनुसार कुछ राज्य सरकारें पंचायतों को राज्य कोष में से एक निश्चित हिस्सा देने के लिए सहमत हो गई हैं, लेकिन ये वे कर हैं जिनसे राज्यों को अधिक राजस्व प्राप्त नहीं होता। अधिक आय देने वाले कर जैसे बिक्री कर, उत्पाद कर आदि को पंचायतों के अधिकार क्षेत्र से बाहर रखा गया है। मध्यावधि मूल्यांकन के अनुसार रिपोर्टों की मुख्य खामी यह है कि ये सिफारिशें स्थानीय निकायों की व्यय सम्बन्धी जिम्मेदारियों के स्पष्ट विवरण पर आधारित नहीं हैं। वास्तव में इस मूल सिद्धांत पर ही कोई ध्यान नहीं दिया गया है कि किसी भी कर या राजस्व के अधिन्यास से पहले व्यय अधिन्यास अवश्य हो जाना चाहिए। इस वजह से आयोग की अधिकांश सिफारिशें संदेहास्पद हो गई हैं। ग्यारहवें वित्त आयोग ने भी कहा है कि राज्य वित्त आयोगों की सिफारिशों में समन्वय नहीं है। कुछ राज्य सरकारों ने नौकरशाहों को ही अध्यक्ष व सदस्य बना दिया ताकि जैसा सरकार चाहे वैसी ही रिपोर्ट आयोग प्रस्तुत कर दे।

पंचायतों के पास कार्य करने के लिए अपने कार्मिक होना भी आवश्यक है। इस तरफ भी कुछ राज्यों द्वारा कुछ प्रयास हुए हैं। मध्य प्रदेश सरकार ने तृतीय व चतुर्थ वर्ग के कर्मचारियों का सम्पूर्ण प्रशासनिक नियंत्रण पंचायतों को सौंप दिया है। केरल में लगभग 40,590 कर्मचारियों को पंचायतों को सौंप दिया गया है, लेकिन अभी तक उनको वेतन राज्य सरकार ही दे रही है। उत्तर प्रदेश सरकार ने भी 11 विभागों के चुने हुए पदाधिकारियों व कर्मचारियों को उनके वेतन के साथ ग्राम पंचायतों को अंतरित कर दिया है। राजस्थान सरकार ग्रामीण इलाकों में तैनात निचले स्तर के कर्मचारियों जैसे पटवारी, अध्यापक आदि की अनुपस्थिति पर नजर रखेगी। इसी प्रकार एक अन्य राज्य उड़ीसा ने भी इस ओर प्रयास किए हैं।

पंचायतों को कार्यात्मक, वित्तीय व प्रशासनिक स्वायत्त संस्थाएं बनाने की दृष्टि से देखें तो केरल और मध्य प्रदेश ने अनेक ऐसे कदम उठाए हैं जो अन्य राज्यों को भी उठाने चाहिए। मध्य प्रदेश में तो अभी हाल में ग्राम स्वराज स्थापित करने के लिए राज्य सरकार ने अधिनियम पास किया है जिसके अन्तर्गत ग्राम सभा को सशक्त किया गया है। वास्तव में पंचायतों का कार्यात्मक, राजकोषीय व प्रशासनिक आधार कमजोर है। अतः राज्य सरकारों को पंचायतों के समांतर संस्थाएं खड़ी करने की बजाए पंचायतों को वित्तीय रूप से समृद्ध करने की जरूरत है। इसके लिए राज्य के योजना और गैर योजना परिव्यय का कम से कम 30 से 40 प्रतिशत हिस्सा पंचायतों को हस्तांतरित करना चाहिए, पंचायतों के उचित रूप से परिभाषित कार्यकलाप हों और उनका अपना पंचायत कैडर होना आवश्यक है। साथ ही साथ पंचायतों के चुने प्रतिनिधियों व कर्मियों को प्रशिक्षण देकर उनका क्षमता वर्धन करना भी आवश्यक है।

ग्राम सभा की स्थिति

ग्राम सभा सम्पूर्ण पंचायती राज व्यवस्था का दिल और दिमाग है क्योंकि यह सभा ग्राम के सभी मतदाताओं को गांव के विकास में निर्णय लेने के लिए अवसर प्रदान करती है। लेकिन 7 वर्षों का अनुभव बताता है कि अपवादों को छोड़कर ग्राम सभा अप्रभावशील ही रही है। इसके अप्रभावशील रहने का मुख्य कारण 73वें संविधान संशोधन में ग्राम सभाओं को शक्ति प्रदान करने के मामले लिखित रूप से परिभाषित नहीं किया जाना है। इसी का कारण है कि इन सभाओं को जैसा कि योजना आयोग का मूल्यांकन कहता है कि राज्य के कानूनों ने ग्राम सभा के कार्यों को एकदम कर्मकाण्ड या धार्मिक अनुष्ठान जैसा बना दिया है। इनका कार्य सुझाव देना, सिफारिश करना, वार्षिक लेखों और प्रशासनिक रिपोर्टों, लेखा परीक्षक की टिप्पणियों आदि पर विचार करना मात्र है। ग्राम पंचायत के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह उनको माने। इसलिए आवश्यक हो जाता है कि ग्राम

सभाओं को अधिक अधिकार मिलें, पंचायती राज प्रतिनिधि इसके प्रति जवाबदेह हों, योजनाओं को बनाने, उसे लागू करने तथा सामाजिक लेखा परीक्षक के रूप में इसकी भूमिका हो। मध्य प्रदेश सरकार ने ग्राम सभा को सशक्त करने के लिए अनेक प्रयास किए हैं। अन्य राज्यों को भी ऐसे कदम उठाने की आवश्यकता है।

जिला योजना समिति

जिला नियोजन समिति का कार्य पंचायतों और नगरपालिकाओं द्वारा तैयार की गई योजनाओं को एकीकृत करके सम्पूर्ण जिले की योजना बनाना है। सही मायने में देखा जाए तो इसी संख्या को तीसरे स्तर की सरकार का दर्जा दिया जा सकता है। लेकिन सात वर्ष के बाद भी केवल नौ राज्यों व दो केन्द्र शासित प्रदेशों में ही यह समिति गठित हुई है। इन समितियों का गठन न होना साबित करता है कि राज्य सरकारें पंचायती राज संस्थाओं को मजबूत करने और विकेन्द्रीकृत योजना बनाने में कितनी कम दिलचस्पी ले रही हैं।

विस्तार अधिनियम

विस्तार अधिनियम का कार्यक्षेत्र आन्ध्र प्रदेश, बिहार, गुजरात, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान और उड़ीसा राज्यों का जनजातीय क्षेत्र है। यह अधिनियम 24 दिसम्बर 1996 को बिहार को छोड़कर सभी जगह लागू हो गया है। यह अधिनियम जल, जंगल व जमीन के अधिकार को तो ग्राम सभा के हाथों में देता ही है साथ में सभी विकास योजनाओं को अनुमोदित करने, सामाजिक क्षेत्रों के सभी पदाधिकारियों तथा संस्थाओं पर नियंत्रण रखने और साथ ही सभी छोटे जल निकाय, लघु खनिज तथा टिम्बर वनज संस्थाओं पर नियंत्रण रखने का अधिकार देता है। इसके अतिरिक्त यह भूमि अंतरण को नियंत्रित करने, मद्य निषेध लागू करने, ग्राम बाजारों का प्रबंध करने और परम्परागत तरीकों से आपसी झगड़े–झंझटों को निपटाने का अधिकार भी ग्राम सभा को देता है। इससे स्पष्ट है कि इस अधिनियम ने ग्राम सभा स्तर पर ग्राम स्वराज लाने की परिकल्पना की है। लेकिन इसे सही तरीके से लागू नहीं किया गया है। मध्यावधि मूल्यांकन के अनुसार इस अधिनियम को पास होने के बाद ही भुला दिया गया है। यह राजनीतिक अथवा नीति संबंधी चर्चा की मुख्यधारा का भाग नहीं बन सका है। विभिन्न राज्यों ने जो अधिनियम पारित किए वे विस्तार अधिनियम के अनुरूप नहीं हैं। शिक्षाविद, प्रकाशक, नीति–निर्माता, यहां तक कि संसदीय लोग भी इस कानून के बारे में अनभिज्ञ हैं। विस्तार अधिनियम का कार्यान्वयन अधिकांश राज्य सरकारों के इस रवैये के कारण रुका है कि वे राज्य ऐसे अधिनियम और उप अधिनियम नहीं बनाना चाहते जो विस्तार अधिनियम के अनुरूप हों। जिसे राज्य सरकारों की ढुलमुल राजनीतिक इच्छा शक्ति माना जा सकता है। इस अधिनियम को पूर्णतया लागू करने के लिए निम्न केन्द्रीय और राज्य अधिनियमों के कुछ खास उपबंधों को संशोधित करने की आवश्यकता है:

(i) भूमि अर्जन अधिनियम (ii) उत्पाद शुल्क/आबकारी अधिनियम (iii) राज्य सिंचाई अधिनियम (iv) लघु वन्य उपज अधिनियम (v) खान एवं खनिज अधिनियम (vi) भू–राजस्व संहिता/अधिनियम (vii) अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति भू–अन्य संक्रमण अधिनियम (viii) साहूकार अधिनियम (ix) विनियमित बाजार अधिनियम।

विस्तारित अधिनियम के अन्तर्गत आने वाले आठ राज्यों में से मध्यप्रदेश सरकार ने इस तरफ सकारात्मक प्रयास किए हैं। अन्य राज्य भी ऐसा करें तभी सही मायनों में इस अधिनियम से जनसाधारण की प्रभुसत्ता, राजनैतिक सहभागिता, सामुदायिक विकास की भावना व स्वतः जनित स्वायत्तता के लिए सम्भावनाएं पैदा हो सकती हैं।

केन्द्र प्रायोजित स्कीमें समानांतर संगठन

73वें संविधान संशोधन अधिनियम की 11वीं अनुसूची में दर्ज 29 विषयों से संबंधित योजनाएं सही मायने में पंचायतों को हस्तांतरित होनी चाहिए तथा इनसे संबंधित वित्त भी पंचायतों को हस्तांतरित होना चाहिए लेकिन ऐसा नहीं हुआ। इसके विपरीत जैसा कि योजना आयोग के मूल्यांकन ने कहा है कि केन्द्र सरकार के भिन्न–भिन्न मंत्रालयों तथा विभागों द्वारा कार्यान्वित की जा रही केन्द्र–प्रायोजित स्कीमों की बाढ़ सी आ गई है।

इन योजनाओं के अतिरिक्त पंचायतों के समानांतर विभिन्न संगठन चलन में हैं। संयुक्त वन प्रबन्धन समितियां, ग्राम शिक्षा जल उपभोक्ता समूह व जिला ग्रामीण विकास अभिकरण इसके उदाहरण हैं। इन समितियों से पंचायतों की क्षमता कम हो जाती है क्योंकि इन समितियों के द्वारा नौकरशाही की अधिक व लोगों की भागीदारी कम हो पाती है। योजना आयोग के मूल्यांकन ने इस बारे में कहा है कि "नौकरशाही भी इन समितियों के पक्ष में है क्योंकि वह इन समितियों के माध्यम से कार्यक्रमों के कार्यान्वयन में अधिक दखल रख सकती है।"

निष्कर्ष

अधिक राज्यों में पंचायतों के चुनाव कराकर राजनैतिक विकेन्द्रीकरण की शुरुआत हो गई है। समाज के कमजोर तबके जैसे दलित और महिलाओं की भागीदारी भी सुनिश्चित हो गई है। पंचायतों के तीनों स्तरों पर लगभग 34 लाख चुने प्रतिनिधि तैनात हैं जिनमें लगभग 11 लाख महिलाएं हैं। लेकिन कुछ अपवाद जैसे मध्य प्रदेश और केरल राज्यों को छोड़कर अधिकतर राज्यों ने कार्यात्मक, वित्तीय व प्रशासनिक विकेन्द्रीकरण के नाम पर पंचायतों को अधिक अधिकार नहीं दिए हैं। अधिकार व शक्तियों के नाम पर यह कहावत चरितार्थ होती है 'घर बार सब तुम्हारा लेकिन कोणी व कुठले को हाथ मत लगाना'।

केन्द्र स्तर पर पंचायतों को अधिक अधिकार और शक्तियां प्रदान करने से संबंधित कानूनी प्रयास करने की बजाय 87वां संविधान संशोधन जैसा विधेयक लोक सभा के पटल पर रखा गया है जो पंचायतों के अध्यक्षों के चुनाव से संबंधित है। लेकिन धीरे–धीरे पंचायतों में चुनकर आये प्रतिनिधियों में जागरूकता बढ़ रही है जिसके कारण वे पंचायतों को अधिक अधिकार व शक्तियां प्रदान करने के मुद्दे पर संगठित हो रहे हैं। शायद वे दिन दूर नहीं जब ग्रामीण जनता शासकों से वे सभी अधिकार लेकर उनका वास्तविक रूप से उपयोग करने लगेंगे जो उन्हें 73वें संविधान संशोधन अधिनियम और उससे जुड़े अन्य कानूनों के तहत दिए गए हैं। ❑

होड़

मोहम्मद साजिद खान

गांव के निठल्लों की बैठक था रग्घू का होटल। शाम को जब सूरज सीवान के पीछे वाले बाग में लुढ़क जाता तो लोगों के दल के दल आ जुटते रग्घू के होटल पर। गांव में था भी यही एक कायदे का होटल। होटल क्या, चार मोटी, थूनियों पर टिके छोटे–से छप्पर की झुग्गी भर था। दिन को तो कम, लेकिन शाम को जो भीड़ जुटती कि चाय पर चाय.. चाय पर चाय .... रग्घू पागल हो जाता। लोग चाय की चुस्कियां लेते और जुट जाते दिन भर गांव में हुई घटनाओं की समीक्षा करने – "माधो ने बकरी चार सौ में ही बेच दी।". "रमजू ने कुएं की जगत पक्की कराई, जाने कहां से पैसा आता है।" "कल्लू मिस्त्री के उपजाऊ खेत चकबंदी में चकरोड निकालते समय भेंट चढ़ गए।".. "बहादुर के बच्चा हुआ है, ससुरा परदेश में रहकर जाने कौन–सा गुल खिला रहा है"... आदि।

सीवान बाजिदपुर गांव, अब वह गांव नहीं रह गया था, जहां के लोग पहले विशुद्ध 'देहाती' कहे जाते थे। रमजू के तीन–तीन लड़के परदेश कमा रहे थे। जब आते, तो जींस पैंट पहनकर वह शहराती लटके–झटके दिखाते कि लोग सोचते रह जाते, भला यही गनेश, तिरलोकी और सुरेश हैं, जिनके नाक बहा करती थी और आस्तीन के कफ नाक पोंछ–पोंछकर भीगे रहते थे ......!

अब गांव के लोगों में भारी बदलाव आ गया था.....। रमेश बाबू के घर हमेशा खेती–बारी होती रही थी। पर अब उनके बच्चों ने खेती करने से इनकार कर दिया था – "बाबूजी, खेती अधिया पर दे दीजिए, हमसे नहीं होती। बी.ए. की पढ़ाई में सारा दिन सिर धुनें कि खेतों में धूल–गर्द खाएं....।"

इस बार चकबंदी में लोगों ने वह दांव–पेंच खेले थे कि मत पूछो। किसका ऊसर किसके खाते में जाए और किसकी लहलहाती खेती किसके हाथों लगे..... इसके लिए चकबंदी अधिकारियों के आगे–पीछे, चापलूसी में तो गांव जैसे जुटा था कि विश्वास ही नहीं होता, यह वही बाजिदपुर है, जहां कभी किसनू महतो ने ठाकुर बलदेव सिंह की बेगारी बजाते–बजाते जान दे दी थी।

गांव में अब खड़ंजे बिछ गए थे। नालियां बन गई थीं। चार सरकारी नल लग गए थे – जिनमें एक नल ठीक लहरु महंत के दरवाजे लगा था। खून–कतल तक बात आ पहुंची थी इसे लगवाने के बारे में। पर किसकी चली थी महंत जी के आगे? सभी को खिला–पिलाकर उन्होंने अपनी सुविधा के लिए नल दरवाजे लगवा लिए थे। दखिनी टोला फिर भी सूखा का सूखा रह गया था, कहने को चार सरकारी नल लगे थे।

बिलकुल बदल गया था सीवान बाजिदपुर। जब से राजनीतिक सरगर्मियों का प्रवेश गांव–गांव हुआ था, यहां की तस्वीर ही बदल गई थी। अब किसी से भी पूछ लीजिए, कौन किस पार्टी का है, सब पता चल जाएगा....।

इधर जबसे रमजू ने नया महिंद्रा ट्रेक्टर निकलवाया था, लोगों के दिलों पर सांप लोट गए थे। गांव का फकीरे कसाई भी अब अपने को कम धनी–संपन्न नहीं समझता था। उससे कैसे सहन होता? एक ही सप्ताह में नया ट्रैक्टर ला खड़ा किया उसने। कानाफूसी में यह भी पता चला कि दो–चार दिनों में वह नई बुलेट मोटर साईकिल भी लाने वाला है।

रमजू ने सुना तो जल उठा। उसे अपने पुत्रों की कमाई पर बड़ा अभिमान था। कहां सह सकता था वह यह बातें ...

सुनने में आता है कि उसी दिन से दोनों में बात–चीत बंद हो गई थी। और यहीं से उनके बीच शुरू हुआ था टकराव.... दिली जलन परवान चढ़ गई थी, दोनों एक–दूसरे को नीचा दिखाने पर आमादा हो गए थे।

एक दिन जब लोगों ने सुना कि फकीरे कसाई ने रमजू को किसी बात पर लाठी से मारा है तो सारा गांव इकट्ठा हो गया तमाशा देखने। पता चला, रमजू ने आगे बढ़कर चबूतरा पाट लिया था, जिससे फकीरे को एतराज हुआ तो रमजू ने उसे गाली दी। इसी बाबत फकीरे ने रमजू पर लाठी चलाई थी। रमजू का सिर फट गया था। खून की पारदर्शी झिल्ली अब भी उसके माथे से गले तक बनी थी। लोग बार–बार ठण्डे पानी से सिर धोने का प्रयास करते, लेकिन खून का रिसाव बंद नहीं हो रहा था।

आज रमजू के सिर पर खून सवार था। वह कुछ भी कर सकता था। उसके घर की औरतें जो मुंह में आए, बक रही थीं। गांव भर मूक था। फिर भी दो लोग उसे रोके हुए थे।

रमजू ने झटके से अपने को छुड़ा लिया और घर की ओर लपका। जब लौटा तो हाथों में कुल्हाड़ी थी – "काट डालूंगा, बोटी–बोटी नहीं बना दिया तो रमजू नाम नहीं....!"

"ठहर रमजुआ!" गांव के वृद्ध गिरधारी बाबा बोले – "उसे मारकर फांसी पर चढ़ना चाहता है।"

"हां–हां, फांसी पर चढ़ जाऊंगा, लेकिन उस कमीने को मारने के बाद.... बाबा बीच में न पड़ो.... आज बुरा हो जाएगा!"

"क्यों न पड़ूं बीच में .. अंय? क्यों न पड़ूं बीच में.... तू अभी होश में नहीं है.... यहीं बात–चीत से निबटारा कर ले, नहीं पुलिस–दरोगा होगा, कोट–कचहरी होगी...।"

"कुछ भी हो बाबा, आज हट जाओ सामने से.... यह मेरे घर का मामला है.... कोई बीच में न बोले, नहीं अंजाम बुरा होगा।"

गिरधारी बाबा ने यह वाक्य सुना तो ठगे–से रह गए सोचने लगे – 'ये घर का मामला है तो क्या हम गांव के नहीं!' वह रमजू के रास्ते से हट गए। रमजू फुंफकारता हुआ फकीरे के घर की ओर बढ़ चला। यह तो कहो फकीरे घर में छिपा बैठा था, नहीं तो रमजू उसे बोटी बनाकर ही दम लेता।

"बंद कर लिया घर हरामजादे....!" रमजू चीख रहा था – "आने दे मेरे लड़कों को। घर खुदवा कर दम न लिया तो असली अहीर नहीं.....!"

अब तक शाम हो चुकी थी। आज रग्घू की दुकान सूनी थी। सारा गांव रमजू के दरवाजे इकट्ठा था। रमजू ने रिपोर्ट लिखा दी थी। पुलिस की गाड़ी पूरे गांव भर में घूमी थी।

लोगों को लग रहा था मानो यमराज आ गए हों गांव में। "फट–फट–फट–फट" करती बुलेट गाड़ी रमजू के दरवाजे रुकी। रमजू की पत्नी को शह मिल गई। वह और जोर–जोर से रोने लगी – "मार डाला रे.... मार डाला उस कसाई ने। बिलकुल गाय–गोरु की तरह पीटा है ...हाय!"

शाम होने तक लिखा–पढ़ी पूरी हो चुकी थी।

फकीरे फरार हो गया था। हफ्तों नहीं मिला। पर पुलिस की पकड़ से कब तक छूटता? अपनी बहन के घर जा छिपा था। पुलिस ने घेरा डाल दिया और गिरहबान पकड़कर घसीटती हुई ले गई पुलिस चौकी। पहले तो वहां उसकी हड्डी–पसली एक की गई, फिर बड़े थाने भेज दिया गया। वहां पूछ–ताछ के बाद मार–पीट का मुकदमा दर्ज हो गया। फकीरे एक सप्ताह जेल में रहा।

पर कहते हैं जब लड़ाई होती है तो घर–परिवार एक हो जाते हैं। सो पहले फकीरे और उसके बड़े भाई में बोल–चाल नहीं थी। पर अब बात इज्जत की थी। बड़े भाई ने कहा – "मन–मुटाव एक तरफ भाई–भाई एक तरफ....।" और वह भी इस अग्नि में आ कूदे। फकीरे की जमानत पर रिहाई हो सकी थी।

फकीरे अपने वकील, राम प्रताप को मुंह मांगी रकम देने को तैयार था। उसके बड़े भाई ने कहा – "वकील बाबू, बात इज्जत की है। मुकदमा हर हाल में जीतना है। इसके एवज चाहे जो खिदमत करनी पड़े हमें। खेत बिक जाएं, ट्रैक्टर बिक जाए.... परवाह नहीं।"

गांव के कायस्थ मनोहर राय लगे हुए थे फकीरे के साथ कि कब उसे पैसों की जरूरत हो और वह तराई वाली उपजाऊ जमीन उसके पास गिरवी रखे उसने कहा भी था – "पैसों की जरूरत हो तो बताना..... कोई कदम उठाना तो मुझे जरूर याद करना, बड़ा भाई समझना हमें।"

रमजू ने भी अपने वकील, गिरीश नारायण की खातिर में कोई कसर नहीं छोड़ी थी। वकीलों की पौ बारह थी। लक्ष्मी की बौछार हो रही थी। वे केस को खींचना चाहते थे, ताकि लक्ष्मी जी की कृपा अनवरत बनी रहे।

महीनों बीत गए थे। इस बार यह छठवीं पेशी थी, लेकिन मामला रफा–दफा नहीं हो सका था।

रमजू घर बैठा सोच रहा था कि उसकी पुत्री, रामकली ने आकर सूचना दी – "वकील बाबू आ रहे हैं।"

"अब क्यों आ रहे हैं।" रमजू की पत्नी, शांती देवी ने रसोई से ही गरदन निकालकर कहा – "परसों ही तो जेब गरम की गई है उनकी।"

तब तक वकील गिरीश नारायण आ पहुंचे। रमजू ने रामकली से कहा – "जा बिटिया, कमरे से कुरसी ला वकील बाबू के लिए।"

कुर्सी आ गई। सामने चारपाई पर शांति देवी ने फूल की चादर डाल दी। रमजू चारपाई पर बिराजे – "कहिए वकील बाबू, केस का क्या हुआ, कुछ पाइंट (प्वाइंट) बना?"

"हां यादव जी..... पर क्या है कि ....।" कहते हुए गिरीश नारायण खीसें निकाल कर बोले – "प्रयास तो बहुत कर रहा हूं। दिन–रात बिजी रहता हूं। पर बीच में जब पैसों की जरूरत आ पड़ती है तो समस्या खड़ी हो जाती है। आप थोड़ी व्यवस्था करा देते तो..।" उन्होंने बाकी के शब्द खा लिए।

रमजू अचकचा गया। पर बात प्रतिष्ठा की थी। बोला – "वकील बाबू, अभी तो पैसों की व्यवस्था हो नहीं पाएगी। हां, अपने लड़कों को खबर भेज दी है कि पैसा भिजवा दें। दो–एक दिन ठहर जाते तो.....।"

"हां–हां, क्यों नहीं यादव जी, आप तो भाई समान हैं। चलिए तब तक पैसा मैं ही लगाता रहूंगा..... आखिर घर की बात है न!" फिर ठहर कर बोले – "लेकिन जरा जल्दी करा देते तो सुविधा रहती।"

गिरीश नारायण खिसके तो शांति देवी बिफर उठी – "बस, यों ही लुटाते रहो पैसा! बात बने या न बने...... वकील तो हैं ही यमराज....!"

"तुम नहीं समझोगी, अगर पैसा नहीं बरसाओगी तो वकील काहे सुनेगा हमारी....? बड़े–बड़े मुअक्किलों से उनका पाला पड़ता रहता है। जिधर का पलड़ा भारी हुआ, उधर का काम हुआ समझो..... यह तो न्याय व्यवस्था के दलाल हैं ही।"

रमजू को दूसरे ही दिन बड़े बेटे, गनेश की चिट्ठी मिली थी। लिखा था कि वह पैसे नहीं भेज पाएगा और न ही तिरलोकी और सुरेश। पहले भी भेजते रहने से वैसे ही वे मालिक के कर्जदार हो गए हैं.....। सात माह तक तनखाह से पैसा कटता रहेगा।

उस दिन रमजू को पहला झटका लगा था। उसके हाथ–पांव ढीले हो गए थे। जिन बच्चों की परदेशी कमाई पर उकसी छाती घमंड से चौड़ी रहा करती थी, वह सिकुड़कर खजूर बन गई थी। उसे आज मुकदमे पर अपनी पकड़ ढीली महसूस हो रही थी।

एक दिन जब शाम को रमजू टहलकर घर पहुंचा तो पत्नी ने कहा – "वकील बाबू आए थे .... फिर आने को कह गए हैं।"

रमजू इंतजार करने लगा। थोड़ी देर बार गिरीश नारायण ने दस्तक दी, तो पल्ले की "खट–खट" के साथ रमजू की धुकधुकी भी बज उठी– "धक–धक।"

"यादव जी, आप मामले को क्यों ढीला कर रहे हैं? मैंने अपना भी पैसा इसी में झोंक दिया है। कुछ तो ख्याल कीजिए....! पैसों का बंदोबस्त हुआ कि नहीं?"

रमजू को चुप्पी लग गई बोला – "सोचता हूं, सीवान के बगल वाली चार बीघा जमीन बेच दूं।"

शांति देवी ने सुना तो जहर उगलने लगी – "कौन कह रहा है वे खेत बिकेंगे....! बेचना हो तो दक्खिन टोला के सातों बीघा बेचो....। यह कृपाल भैया ने सौगात में दिया था। मेरे मैके की चीज पर हक मत जताना.....!"

यह दूसरा झटका लगा था रमजू को।

वकील बाबू खिसियाए से रह गए। रमजू को पत्नी की बात तीर–सी लगी। जी चाहा मुंह तोड़ दे सिल से। पर मन मसोसकर रह गया।

दूसरे ही दिन मनोहर राय ने सातों बीघा जमीन लिखा ली थी अपने नाम। हालांकि उसकी नजर सीवान के बगल वाले खेतों पर थी, जिनमें फरहा भी छिड़को, तो ध्यान के बिरवे लहलहा उठें.....। चलो खैर.... नहीं मिले, न सही। मनोहर राय ने संतोष कर लिया था। पर दांव पर तो एक न एक दिन वे भी खेत लगने थे.....!

और उस दिन के बाद से रमजू को झटके पर झटके लगते रहे।

रग्घू के होटल पर आजकल यह खबर जोरों पर थी कि फकीरे के खेत, ट्रैक्टर.... सब बिक गए हैं। जमा–पूंजी जाती रही है। अब तो रमजू ही ठहरेगा। पर कुछ लोगों का

कहना था कि रमजू पहले डिगेगा, क्योंकि आजकल उसके घर पर एक समय सत्तू खाया जा रहा है।

उस दिन गांव के गिरधारी बाबा भी रग्घू की दुकान पर कुज्जे में चाय पी रहे थे। लोगों की बातों से उनकी छाती फटी जा रही थी। उन्होंने एक जमाना देखा था। फकीरे और रमजू के बाप–दादों के बीच उनका उठना–बैठना रहा था। फकीरे और रमजू को तो उन्होंने गोद खिलाया था – रमजू तो अक्सर उन पर पेशाब कर दिया करता था और वह स्नेह से पुलक उठते थे। वे दोनों तो उनके बच्चों के समान थे। कैसी विपत्ति आ पड़ी थी गांव पर! जब गिरधारी बाबा सुनते कि आज दोनों की पेशी है तो कील–सी चुभती उनके हृदय में। वह जानते थे, दोनों बिक जाएंगे, पर झूठी प्रतिष्ठा के पीछे लड़ते रहेंगे....।

इस समय सूर्य कोई दो लाठी ऊपर रहा होगा। चिड़ियां वापस लौट चली थीं। बगुलों के दल पुलिया के पास वाले चिलवल के पेड़ पर जमा हो गए थे। खेतों की हरियाली की मिश्रित सोंधी सुगंध उड़ने लगी थी। रमजू पुलिया पर बैठा छोटे–छोटे पत्थर पानी में फेंक रहा था — "डुब्ब...डुब्ब!" वह चितिंत था कि कल उसे अपने पुरखों की वह जमीन भी बेचनी पड़ेगी, जिसे बेचकर उसके अंग कट जाएंगे।

"क्या कर रहे हो रमजू?"

"कौन? गिरधारी बाबा!"

गिरधारी बाबा बगल में बैठ गए। उसके पीठ पर प्यार से हाथ फेरा। रमजू को लगा, जैसे पिता समान आसमान झुक आया हो उसकी पीठ पर।

जब आदमी दुखी हो और उस समय कोई अपना आ बैठे, तो आंखों का बांध अगवानी के लिए टूट पड़ता है.....। रमजू फफक उठा। पर कुछ बोलते नहीं बना। क्या–क्या सपने संजोये थे उसने...... बिटिया की शादी खूब धूम–धाम से करेगा, गांव भर में बारात घुमाएगा। सजी हुई कार आएगी, जिसमें लाडली बैठकर जाएगी।

सब पानी हो गया था। रमजू को रोना आ रहा था। जी चाहता था वह फूट–फूटकर रोए....। उसे आज याद आ रहा था वह दिन, जब स्कूल न जाने के लिए जिद् करने पर मां ने उसे पीटा था और खाना दिए बिना किवाड़ बंद कर लिए थे, उस समय गिरधारी बाबा ने उसे शरण दी थी और गुड़–चबेना देकर आज ही की तरह हाथ रखा था – उतना ही कोमल, उतना ही आत्मीय....!

गिरधारी बाबा बोले – "सुनने पर तो तुम्हें जरूर बुरा लगेगा रमजू, पर मेरी एक बात मान लो बेटा..... मान लो। तुम्हारे उजड़ते घरों को मैं नहीं देख सकता!" उनकी सूखी आंखों में आंसू थे।

रमजू और भावुक हो गया। उसका बदन कांपने–सा लगा।

"तुम मुकदमा वापस ले लो बेटा, वापस..।" गिरधारी बाबा ने सहज ही आंखों से छलक आए आंसुओं को पोंछते हुए धैर्यपूर्वक कहा – "सोचो बेटा..... तुम्हें इन आपसी मुकदमों ने क्या दिया? बोलो.... इन मुकदमों ने कितनों के घर उजाड़ दिए हैं बेटा! उन्हें इससे मिला क्या – ऊंचे घरों के स्थान पर खण्डहर ... पेट भर खाने के स्थान पर भूख....। ये मुकदमे बाजी बड़ी जालिम चीज है बेटा..... अगर उस दिन उस छोटी–सी बात को घर पर ही सुलझा लेते तो आज यह नौबत न आती।"

रमजू ने देखा, बाबा रो रहे थे।

शाम ढल चुकी थी। चिड़ियों का कलरव बंद हो चुका था। नाले का पानी शांत हो गया था। रमजू अचानक उठ खड़ा हुआ। उसके कदम फकीरे के घर की ओर बढ़ चले।

गिरधारी बाबा पुलक उठे – "उधर नहीं बेटा, इधर चलो।" उन्होंने कहा – "फकीरा मेरे घर पर बैठा है। वह भी मुकदमे से थक चुका है। वह सुलह चाहता है। मैं उससे वादा लेकर आया हूं कि रमजू को लेकर आऊंगा। आज तुमने मेरी लाज रख ली है......।"

फिर उस दिन रमजू और फकीरे गले मिलकर ऐसे फूट–फूटकर रोये, जैसे बेटियां विदा करते समय परिवार के लोग रोते हैं। कितना अच्छा लगा था उस समय गिरधारी बाबा को। वह बस दोनों को देखे जा रहे थे।

उस शाम रग्घू का होटल सूना नहीं था, बल्कि गांव के लोगों से भरा हुआ था। चाय पर चाय..... चाय पर चाय.... रग्घू पगलाया था। लोगों में जैसे नई चेतना आ गई थी। उस दिन लोगों के मुंह से यही सुनने को मिल रहा था – "भगवान बचाए इन मुकदमों से.....।" ❑

जल संकट : सम्पूर्ण विश्व के सामने एक कठिन चुनौती

डा. दलीपसिंह

विगत सदी मानव–जीवन के विकास के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण रही। जहां दुनिया के प्रमुख देशों के साथ–साथ भारत ने भी कई क्षेत्रों में महत्वपूर्ण उपलब्धियां हासिल करके देश को विश्व मानचित्र पर एक परमाणु शक्ति सम्पन्न राष्ट्र के रूप में स्थापित किया है, वहीं विकास की इस भौतिकवादी दौड़ में मनुष्य ने प्रकृति के साथ छेड़छाड़ करके अपने लिए अनेक समस्याएं खड़ी कर दी हैं जिनमें जल संकट की समस्या को प्रमुख रूप से लिया जा सकता है। यद्यपि पृथ्वी का दो तिहाई से भी अधिक भाग जल का है, किन्तु इस उपलब्ध जल का 97 प्रतिशत से भी अधिक भाग समुद्रों में पाया जाने वाला लवणीय और खारा जल है जो कि जीवन के योग्य नहीं है। संयुक्त राष्ट्र की एक रिपोर्ट के अनुसार जल का मात्र 2.5 प्रतिशत भाग ही जीवधारियों के लिए उपयोगी तथा पीने योग्य है। इस पीने योग्य जल का एक तिहाई हिस्सा प्राकृतिक भूमिगत संसाधनों से प्राप्त होता है, शेष दो तिहाई भाग हिमाच्छादित शिखरों, हिमनदों, ग्लेशियरों एवं नदियों से प्राप्त होता है। लेकिन सतही जल के विषाक्तीकरण होने के कारण इससे महामारियां एवं विभिन्न प्रकार की बीमारियां फैलती हैं जिसके कारण वह पीने योग्य नही रह गया है। इसके अलावा भू–जल का एक बहुत बड़ा भाग (लगभग 87 प्रतिशत) आमतौर पर मनुष्य की पहुंच से दूर है जिसको प्राप्त करना अत्यंत कठिन है। इस प्रकार प्राप्त करने योग्य जल भी मात्र 13–12 प्रतिशत के लगभग है। रिपोर्ट में कहा गया है कि विश्व के 580 करोड़ लोगों में से करीब 20 फीसदी लोगों को पीने का पानी उपलब्ध नहीं हो पाता है और लगभग 50 फीसदी लोग प्रदूषित जल पीने के लिए मजबूर हैं। इसी को मद्देनजर रखते हुए अन्तर्राष्ट्रीय संगठन, वैज्ञानिक, पर्यावरणविद् एवं राजनीतिज्ञ खुलकर यह घोषणा करने लगे हैं कि आने वाली सदी की सबसे कठिन चुनौती जल संकट की है। प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने भी लोकसभा में इस बात को स्वीकार किया है कि यदि आने वाले समय में कोई युद्ध होगा तो वह जल के मुद्दे को लेकर होगा। देश में कर्नाटक तथा तमिलनाडु, हरियाणा और दिल्ली के बीच जल के मुद्दे को लेकर जो तनाव चल रहा है वह इसका उदाहरण मात्र है।

जल एक ऐसा महत्वपूर्ण संसाधन है जिसके बिना जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती है और हवा के बाद जीवन के लिए यह एक आवश्यक तत्व है। वस्तुतः सभी प्रकार के जीवन के लिए जल नितांत आवश्यक है। जल के विषय में गोथे की यह उक्ति कि "प्रत्येक वस्तु जल से ही उद्‌भवित हुई, प्रत्येक वस्तु जल द्वारा ही प्रतिपालित होती है" सत्य ही है क्योंकि समस्त स्थलीय तथा जलीय परितंत्रों में जीवों का उदभव, उनकी संरचना तथा उनके परिपालन के लिए जल एक अनिवार्य तत्व है। अतः जल का संरक्षण किया जाना न केवल मानव–जीवन के लिए ही आवश्यक है, वरन् समस्त जीवधारियों और वनस्पतियों के जीवन के लिए एक अमूल्य निधि भी है। जल मात्र पीने के लिए ही आवश्यक नहीं है, बल्कि जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं जैसे : भोजन बनाने, सफाई करने, अन्य घरेलू कार्यों, मत्स्य पालन, सिंचाई करने, बिजली बनाने, दमकल कार्यवाही हेतु, नौकायन आदि अनेक महत्वपूर्ण कार्यों के लिए भी आवश्यक है। इसीलिए भारतीय संस्कृति में जल को देवता स्वरूप मानकर उसकी पूजा अर्चना की जाती है। "जल ही जीवन है" उक्ति को चरितार्थ करते हुए आदि संस्कृतियां नदियों के किनारे उपजीं, बसीं और वहीं उनका विकास एवं विस्तार हुआ। आज वर्जनाहीन समाज और निरंतर पतनोन्मुखी जीवन शैली में भले ही सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्य बदल गए हों, पर हमारी प्राचीन संस्कृति में नदियों, तालाबों, पोखरों में जल–मूत्र विसर्जन की तो कल्पना भी नहीं की जा सकती है। मनुस्मृति में कहा गया है कि,

"नाप्सु मूंत्र वाष्टोवनं समुत्सुजेत्।
अमेध्यलिप्तमन्याद्वा लोहितं वा विषाणि वा।।"

अर्थात्; पानी में मूल–मूत्र, थूक अथवा अन्य दूषित पदार्थ, रक्त या विष का विसर्जन नहीं करना चाहिए। इसी प्रकार पावन पवित्र गंगा के सम्बन्ध में कहा गया है कि *"गंगे तव दर्शनात् मुक्तिः।"* यानी कि गंगा के दर्शन मात्र से ही मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है। किन्तु आज के परिप्रेक्ष्य में यह उक्तियां सत्य नहीं लगती हैं। सामाजिक मूल्यों में इतना परिवर्तन हो गया है कि भगीरथ के पुरखों का कलुष धोने वाली गंगा मल, मूत्र एवं शहरों की गन्दगी, फैक्ट्रियों का कचरा एवं विषैले पदार्थों, मरे हुए जानवरों, लाशों, धार्मिक पर्वों पर मूर्तियों, दीपकों, फूलों एवं अन्य कई प्रकार के गंदे पदार्थों के विसर्जन के कारण इतनी प्रदूषित हो चुकी है कि घरों में अमृत के समान रखा जाने वाला गंगा का जल, पीने

योग्य तो दूर, नहाने योग्य भी नहीं रहा है। एक अनुमान के अनुसार गंगा के पानी में इतना जहर समा गया है कि उसमें नहाने से भी संक्रामक रोग और महामारी फैलने का खतरा हो गया है। लाखों लोगों के गंगा में स्नान करने के बाद गंगा जल में उपस्थित रासायनिक तत्वों और उसकी अम्लीयता तथा क्षारीयता का संतुलन बुरी तरह गड़बड़ा जाता है और ऐसे में नहाना जोखिम भरा हो सकता है। गंगा की पवित्रता के विषय में योजना आयोग के सदस्य डी.जी. थिमैया ने टिप्पणी करते हुए कहा था कि "गंगा में अब अपने श्रद्धालुओं के पाप धोने की शक्ति नहीं रह गई है वे उसे पूजते तो जरूर हैं पर यह श्रद्धा उन्हें गंगा को मैली होने से नहीं रोकती है। कितना अच्छा होता, अगर गंगा भी दूसरी नदियों की तरह हमारे लिए पूजनीय न होती, कम से कम तब उसको चढ़ौती में मुर्दे तो नहीं मिलते।" यही कारण है कि सारे भारत को सुख और समृद्धि देने वाली गंगा आज अनेक बीमारियों की जन्मदात्री बन गई है। एक अनुमान के अनुसार प्रतिवर्ष हमारे देश में लगभग 10 करोड़ टन विषैला कचरा कल–कारखानों द्वारा उत्पादित होता है जिसको या तो खुले में निस्तारित किया जाता है या नदियों में फेंक दिया जाता है जिसका हानिकारक प्रभाव हमारे वायुमण्डल एवं जल स्रोतों पर पड़ रहा है। यहीं नहीं हमारे नगर प्रतिदिन कम से कम 80 हजार टन कूड़े कचरे का उत्पादन करते हैं जिसका प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रभाव वातावरण एवं हमारी नदियों पर पड़ता है। परिणामस्वरूप, नगरों के नजदीक रहने वाले लोग पेचिश, मलेरिया और अन्य अनेक घातक बीमारियों के शिकार होते जा रहे हैं। स्वास्थ्य मंत्रालय की एक रिपोर्ट के अनुसार प्रतिवर्ष शहरों में तीन लाख से भी अधिक बच्चे केवल पेचिश के कारण मरते हैं जो कि गंदा जल पीने के कारण होती है।

वर्तमान भोगवादी पर्यटन एवं प्रकृति पर विजय पाने की मानव–लालसा के चलते आज गंगा अपने मूल स्रोत गौमुख से ही प्रदूषित हो चुकी है। इसका अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि गंगोत्री में प्रतिवर्ष न्यूनतम 37 से लेकर 50 कुंतल कचरा एकत्र होता है।

इसमें से अधिकांश प्लास्टिक के डिब्बे, पोलीथीन, विभिन्न प्रकार का कचरा सफाई कर्मचारियों द्वारा भगीरथी के तट पर फेंक दिया जाता है। यहीं नही, होटलों एवं धर्मशालाओं के पिछवाड़ों में कचरे के ढेर आसानी से देखे जा सकते हैं। इसके अलावा कृषि फसलों में विभिन्न प्रकार के कीटनाशकों का प्रयोग करने से भी नदियों का जल विषाक्त हो चुका है, बचे–खुचे जल स्रोत सूखने के कगार पर हैं। एक अनुमान के अनुसार उत्तर प्रदेश के पर्वतीय भाग उत्तराखंड में लगभग 50 प्रतिशत जल के स्रोत सूख चुके हैं जो कि एक भयावह स्थिति का संकेत है। जल स्रोतों के सूखने का प्रमुख कारण वनों का निरंतर हो रहा विनाश एवं आग से हो रही तबाही है। क्योंकि वृक्षों की जड़ें भूमि को बांधे रखती हैं और वर्षा का अधिकतम जल मिट्टी एवं वृक्षों की जड़ें सोख लेती हैं। किन्तु वनों के कट जाने से वर्षा का अधिकांश जल बह जाता है जो कि एक तरफ तबाही का कारण भी बनता जा रहा है, तो दूसरी तरफ जल स्रोतों के ह्रास का कारण भी है। परिणामस्वरूप जहां एक ओर ग्लेशियरों के पिघलने से नदियों का जल स्तर बढ़ता जा रहा है वहीं दूसरी ओर लगातार जल स्रोतों में पानी का स्तर गिरता जा रहा है। भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण के अनुसार 19वीं शताब्दी में गंगोत्री ग्लेशियर अपने मूल स्थान से 73.15 मीटर पीछे खिसका है। तत्पश्चात 1971 से 1975 के बीच यह ग्लेशियर अपने मूल स्थान से 117 मीटर पीछे हटा है। एक अनुमान के अनुसार गंगोत्री 18 मीटर प्रतिवर्ष की रफ्तार से पीछे खिसक रहा है। यही कारण है कि जहां गर्मियों में देश के विभिन्न क्षेत्रों में पीने के पानी के लिए त्राहि–त्राहि मची रहती है, वहीं बरसात में बाढ़ के कारण देश के विभिन्न भाग जलमग्न हो जाते हैं जिसमें करोड़ों रुपये की जन–धन की हानि तो होती ही है लाखों लोग बेघरबार होकर जीवन भर के लिए मोहताज हो जाते हैं। टाटा एनर्जी रिसर्च इंस्टीट्यूट की एक रिपोर्ट के अनुसार 1947 में भारत में प्रति व्यक्ति पीने के पानी की उपलब्धता जो 6,000 घनमीटर प्रतिवर्ष थी वह वर्ष 1997 में घटकर मात्र 2,300 घनमीटर रह गई है। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि यदि पर्यावरणीय क्षति की दिशा और दशा यही रही तो यह

मात्रा और ज्यादा घटकर 1,600 घनमीटर रह जाएगी।

जहां एक ओर लगातार जनसंख्या वृद्धि के कारण जल स्रोतों पर दबाव बढ़ता जा रहा है तथा जल स्रोत लगातार घट भी रहे हैं। वहीं दूसरी ओर जल के मूल स्रोतों एवं नदियों के जल को स्वच्छ करने के लिए कोई कारगर कदम न उठाए जाने के कारण यह स्थिति दिन–प्रतिदिन और भी भयावह होती जा रही है, जो कि 21वीं सदी के लिए एक ज्वलंत समस्या के रूप में उभर कर सामने आ सकती है। यद्यपि गंगा सफाई अभियान चलाकर उसके नाम पर करोड़ों रुपये खर्च किए जा चुके हैं, किन्तु नतीजा रहा वही *ढाक के तीन पात*। सन् 1974 में जल प्रदूषण नियंत्रण कानून बना, इसके तहत केन्द्र और राज्य स्तर पर प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड बनाए गए। सन् 1978 में इस कानून को संशोधित कर और शक्ति–सम्पन्न बनाया गया। फिर भी काम नहीं बना तो सन् 1982 में इस कानून में परिवर्तन कर इसे इतना ताकतवर बना दिया गया कि इसके तहत यदि कोई व्यक्ति, विभाग या कारखाने प्रदूषणकारी पाए गए तो उनकी बिजली पानी तक काटा जा सकता है, और उन्हें बंद भी किया जा सकता है। यही नहीं किसी को भी ऐसी गतिविधियों के कारण जेल की सजा तक हो सकती है। इतने अधिकारों के बावजूद प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड आज तक अस्तित्व में नहीं आया। पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने अपने प्रधानमंत्रित्व काल में 14 जून 1986 में 1,700 करोड़ रुपये का गंगा एक्शन प्लान बनाया। गंगा की साफ–सफाई का कार्य करना कठिन एवं दुष्कर कार्य था इसलिए इस प्लान को दो चरणों में बांटा गया। इस कार्ययोजना के पहले चरण की लागत 186 करोड़ रुपये आंकी गई, पर केन्द्र और राज्य सरकारों के 600 करोड़ रुपये से अधिक खर्च होने के बावजूद इन 13 सालों में गंगा का पानी साफ होने के बजाय और अधिक मैला हो गया है।

जब प्रशासन ने गंगा के प्रदूषित होने पर कोई ध्यान न दिया तो न्यायालय को सक्रिय होना पड़ा। इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने गंगा के प्रदूषण और उसकी दुर्दशा के लिए जिम्मेदार नगरपालिकाओं और जिलाधिकारियों को निर्देश दिए कि, वे गंगा को और अधिक प्रदूषित होने से बचाएं। यही नहीं सैकड़ों कल कारखानों को बंद करने के भी आदेश दिए गए, किन्तु थोड़ी बहुत सक्रियता दिखाने के बाद स्थिति फिर जस की तस बनी हुई है। भारत में पिछले पांच दशकों के औद्योगिक विकास के कारण सिर्फ धरती के ऊपर के जल का प्रदूषण ही नहीं बढ़ा है वरन् भू–जल भी अत्यधिक मात्रा में प्रदूषित हो गया है। जिन प्रदेशों में हरित क्रांति हुई उन सभी प्रदेशों में भू–जल का स्तर बहुत अधिक नीचे चला गया है। पंजाब में जहां हरित क्रांति का सबसे ज्यादा फायदा देखा गया है वहां का भू–जल 60 से 125 फीट तक नीचे चला गया है। गुजरात और महाराष्ट्र में तमाम छोटी–बड़ी फैक्ट्रियां लगी हैं वहां 50 मीटर नीचे तक प्रदूषित पानी ही निकलता है जो पीने योग्य तो है नहीं, साथ ही साथ तमाम रासायनिक अवयवों की उपस्थिति के कारण जानलेवा भी है। फलतः पृथ्वी पर जल संकट लगातार गहराता जा रहा है। इसके अलावा नदियों के मूल स्रोतों के संरक्षण एवं विकास की ओर भी ध्यान न दिया जाना जल संकट की समस्या को और अधिक विकट बना रहा है। यदि समय रहते हुए इस समस्या की ओर ध्यान नहीं दिया गया और उसके समाधान के लिए उचित कदम नहीं उठाए गए, तो 21वीं सदी में मनुष्य को जलसंकट की कठिन चुनौती से जूझना पड़ेगा। वस्तुतः जल स्रोतों के संरक्षण एवं प्रदूषण से मुक्त रखने के लिए निम्न सुझावों पर अमल किया जा सकता है :

- जल के संरक्षण के लिए सर्वप्रथम जल स्रोतों की सफाई की ओर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।
- वनों के संरक्षण एवं संवर्द्धन पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए जिससे जलस्रोतों पर पड़ने वाले विपरीत प्रभाव से बचा जा सके।
- पहाड़ों की चोटियों में इस प्रकार की कृत्रिम झीलें, तालाब, पोखरें आदि बनाई जानी चाहिए, जिसमें बरसात का पानी इकट्ठा होकर वर्ष भर रिस–रिसकर नीचे के जल स्रोतों में जाता रहे। इससे एक ओर जहां वर्षभर पानी की आपूर्ति होती रहेगी, वहीं बरसात में बाढ़ एवं भूस्खलन जैसी आपदाओं से भी बचा जा सकता है। इसके लिए इन पोखरों, तालाबों एवं झीलों के चारों तरफ सघन एंव मिश्रित वनीकरण किया जाना अनिवार्य है।
- घरों की छतों से जल निकासी की व्यवस्था करके वर्षा के जल को एक स्थान पर इकट्ठा किया जाना चाहिए जिसका उपयोग सब्जी उत्पादन, कपड़े एवं बर्तन धोने आदि कार्यों में किया जा सके।
- नदियों में मरे हुए जानवरों, मल–मूत्र एवं मुर्दों को फेंकने पर प्रतिबंध लगाया जाना चाहिए और इसके लिए घाटों के नजदीक मुर्दों को जलाने के लिए इलैक्ट्रिक भट्टियों का निर्माण किया जाना चाहिए। इससे जहां एक ओर वनों को विनाश होने से बचाया जा सकता है वहीं दूसरी ओर नदियों को प्रदूषण से मुक्त भी रखा जा सकता है।
- शहरों में सीवेज लाइन एवं फैक्ट्रियों के प्रदूषित जल को नदियों में डालना कानूनी अपराध घोषित किया जाना चाहिए। इन दूषित पदार्थों को वैकल्पिक ऊर्जा में बदलने की व्यवस्था भी की जानी चाहिए। यदि दूषित पदार्थों को कोई व्यक्ति, संस्था या कल कारखाने नदियों में डालते हुए पकड़े गए तो उसकी सख्त सजा का प्रावधान होना चाहिए।
- धार्मिक पर्वों पर नदियों में मूर्तियों एवं अन्य सामग्री के विसर्जन पर भी रोक लगाई जानी चाहिए। जिसके लिए जन जागृति लाकर एवं पूरे देश में गंगा बचाओं अभियान के तहत धार्मिक लोगों को इसके प्रति जागृत करना होगा।
- गंगा स्वच्छता अभियान को पूर्ण ईमानदारी से कार्यान्वित किया जाना चाहिए।
- जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण लगाया जाना चाहिए।

अतः 'जल ही जीवन है' की उक्ति को चरितार्थ करते हुए जल स्रोतों के संरक्षण एवं विकास की ओर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए जिससे आने वाली सदी में इस विकट समस्या से बचा जा सके और मानव–जीवन के अस्तित्व को बचाया जा सके। ❑

Do you want to know about:

भारत
2001

India's Foreign Policy
Information Technology
Disinvestment and Globalisation
Recent Amendments to the Constitution
and such other important topics:

- which directly or indirectly have a bearing on your life;
- which you often encounter at the competitive examinations;
- which you generally face in job interviews.

india
2001

Authentic replies to such posers are with us in our Reference Annual

भारत 2001 / INDIA 2001

Book your copy with the local agent or contact:

Sales Emporia of Publications Division: Patiala House, Tilak Marg, New Delhi, Ph: 011-3387983; Super Bazar, Connaught Circus, New Delhi, Ph: 011-3313308; Hall No.196, Old Secretariat, Delhi, Ph: 011-3968906; Rajaji Bhavan, Besant Nagar, Chennai, Ph: 044-4917673; 8, Esplanade East, Kolkata, Ph: 033-2488030; Bihar State Cooperative Building, Ashoka Raj Path, Patna, Ph: 0612-653823; Press Road, Thiruvananthapuram, Ph: 0471-330650; 27/6 Rammohan Rai Marg, Lucknow, Ph: 0522-208004; Commerce House, Currimbhoy Road, Ballard Pier, Mumbai, Ph: 022-2610081; State Archaeological Museum Building, Public Gardens, Hyderabad, Ph: 040-236393; 1st Floor, F-Wing, Kendriya Sadan, Koramangala, Bangalore, Ph: 080-5537244; PIB, C.G.O. Bhavan, A-Wing, A.B. Road, Indore; PIB, 80, Malviya Nagar, Bhopal; PIB, B-7/B, Bhawani Singh Road, Jaipur; PIB, Daulat Building, St. Inez, Panaji.

PUBLICATIONS DIVISION
MINISTRY OF INFORMATION & BROADCASTING
GOVERNMENT OF INDIA

राष्ट्रीय जल नीति, जल–संकट और समाधान के उपाय

डा. उमेश चन्द्र अग्रवाल

संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा हाल ही में प्रकाशित आंकड़ों के अनुसार विश्व के विकासशील देशों के लगभग 12 करोड़ व्यक्तियों को स्वच्छ और पीने योग्य जल उपलब्ध नहीं है। विकासशील देशों में प्रतिवर्ष 2 करोड़ 50 लाख लोगों की मौत दूषित जल से सम्बन्धित बीमारियों के कारण हो जाती है तथा विश्व के विकासशील देशों के 35 प्रतिशत से भी अधिक लोगों को स्वच्छ और पीने योग्य पानी उपलब्ध नहीं है। इन आंकड़ों के अनुसार विश्व में केवल 75 प्रतिशत शहरी और 40 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रों में ही स्वच्छ पेयजल उपलब्ध है। यह भी अनुमान लगाया गया है कि इक्कीसवीं शताब्दी के प्रथम दशक में ही संसार के 25 से भी अधिक देशों में जल का गम्भीर संकट उत्पन्न हो जाएगा। बढ़ती जनसंख्या का जल संसाधनों पर गहरा प्रभाव पड़ा है और सभी प्रमुख नगरों की गन्दी बस्तियों में रहने वाले लोगों को घरेलू कार्य हेतु स्वच्छ पानी की प्राप्ति के लिए अपनी कुल आय का 20 प्रतिशत तक व्यय करना पड़ता है। अपने देश के सन्दर्भ में जल संसाधनों का उचित नियोजन और प्रबन्ध न हो पाने के कारण इनकी स्थिति और भी अधिक शोचनीय है। हमारे 'राष्ट्रीय पर्यावरण अभियांत्रिक शोध संस्थान' के एक नवीन शोध सर्वेक्षण के अनुसार देश में उपलब्ध जल राशि का 70 प्रतिशत भाग पीने योग्य नहीं है। दूषित जल के उपयोग से उत्पन्न रोगों के कारण देश को हर वर्ष 7 करोड़ 30 लाख कार्यदिवसों की हानि होती

भूजल स्तर के नीचे जाने से ग्रामीण क्षेत्रों में पेय जल की समस्या गम्भीर होती जा रही है

तालिका – 1

कुछ देशों में जल की उपलब्धता और उसका उपयोग

क्रं. सं.	देश	उपलब्ध जल		जल का उपयोग		विभिन्न क्षेत्रों में उपयोग प्रतिशत		
		कुल (घन किमी.)	प्रतिव्यक्ति (घन मी./वर्ष)	कुल (घन किमी.)	प्रतिव्यक्ति (घन मी./वर्ष)	घरेलू	उद्योग	कृषि
1.	भारत	1850	2350	380.00	610	3	4	93
2.	आस्ट्रेलिया	343	21300	17.80	1310	16	6	77
3.	इंग्लैण्ड	120	2140	28.35	510	21	79	1
4.	जर्मनी	96	1100	50.53	600	14	71	14
5.	फ्रान्स	170	3090	37.20	960	16	71	13
6.	चीन	2800	2580	460.00	460	6	7	87
7.	जापान	547	4480	107.80	920	17	33	50
8.	अर्जेन्टीना	694	22030	27.60	1060	9	18	73
9.	अमरीका	2478	10230	472.00	2190	10	49	41
10.	कनाडा	2901	111740	36.15	1500	18	70	11
11.	दक्षिण अफ्रीका	50	1470	9.20	400	17	0	83

है और इससे राष्ट्रीय कोष का प्रतिवर्ष 700 करोड़ रुपये से भी अधिक का नुकसान होता है।

जल की उपलब्धता

सम्पूर्ण मानव–जाति के लिए पृथ्वी पर उपयुक्त मृदु जल की उपलब्धता के बारे में यदि देखा जाए तो विदित होता है कि यहां कुल उपलब्ध जल का लगभग नगण्य–सा भाग मानव द्वारा प्रयोग किया जाता है। यूनेस्को की एक ताजा रिपोर्ट के अनुसार पृथ्वी पर जल की कुल मात्रा का 97.2 प्रतिशत समुद्रों में समुद्री जल के रूप में, 2.2 प्रतिशत हिम नदियों और हिम शिखरों में बर्फ के रूप में तथा 0.6 प्रतिशत भूमिगत और धरातल पर मृदु जल के रूप में उपलब्ध है। इस प्रकार पृथ्वी पर पाए जाने वाले कुल जल का 0.6 प्रतिशत भाग ही, मानव प्रयोग हेतु मृदु जल के रूप में मिलता है। यह जल दो रूपों में उपलब्ध है एक तो भूमिगत जल के रूप में जमीन के अंदर और दूसरे सतही जल के रूप में जमीन के ऊपर नदियों, झीलों और तालाबों में। भूमिगत जल के रूप में इसकी मात्रा 0.59 प्रतिशत और सतही जल के रूप में मात्र .01 प्रतिशत ही है। इसका नगण्य–सा भाग वायुमण्डल में जलवाष्प के रूप में भी मिला रहता है। मृदु जल का लगभग 97.74 प्रतिशत भाग भूमिगत जल के रूप में पृथ्वी की निचली परतों में उपलब्ध है और शेष 2.26 प्रतिशत सतही जल के रूप में उपलब्ध है। सतही जल में से 1.47 प्रतिशत भाग झीलों में, 0.78 प्रतिशत भाग मिट्टी में नमी के रूप में तथा मात्र .01 प्रतिशत भाग नदियों और धाराओं के रूप में मिलता है। इस सन्दर्भ में एक बात गौरतलब है कि पूरे संसार में होने वाली जलापूर्ति का लगभग 95 प्रतिशत भाग भूमिगत जल से ही किया जाता है और शेष 5 प्रतिशत जलापूर्ति सतही जल अर्थात नदियों, झीलों और नहरों आदि से होती है।

संसार के विभिन्न देशों में उपलब्ध जल की मात्रा और जल के उपयोग पर यदि दृष्टि डालें तो विदित होता है कि हमारे देश में जल की पर्याप्त उपलब्धता तो है लेकिन प्रति व्यक्ति जल का उपयोग बहुत कम है। घरेलू और औद्योगिक कार्यों में भी जल का उपयोग विभिन्न देशों की तुलना में काफी कम है। इस सम्बन्ध में तालिका–1 के अवलोकन से स्पष्ट है कि भारत में प्रति व्यक्ति जल का उपयोग मात्र 610 घन मीटर प्रतिवर्ष है जबकि आस्ट्रेलिया, अर्जेन्टिना, अमरीका और कनाडा में ये 1,000 घन मीटर प्रतिवर्ष से भी अधिक है। इसी प्रकार घरेलू उपयोग में हम केवल 3 प्रतिशत जल का ही उपयोग कर पा रहे हैं जबकि इंग्लैण्ड, आस्ट्रेलिया, फ्रांस और कनाडा आदि देशों में यह उपयोग पांच गुने से भी अधिक है। लगभग इसी प्रकार की स्थिति औद्योगिक क्षेत्र में भी पाई जाती है।

हमारी जल नीति

जल को अतिविशिष्ट प्राकृतिक संसाधन, मानव की मूलभूत आवश्यकता तथा अमूल्य राष्ट्रीय निधि के रूप में स्वीकार करते हुए जल संसाधन के नियोजन और विकास को सुनिश्चित करने के अहम उद्देश्यों के साथ 1987 में देश की "राष्ट्रीय जल नीति" घोषित की गई। इसके अनुसार जल को विभिन्न स्रोतों, क्षेत्रों अथवा राज्यों की सीमाओं में विभाजित न होने वाला संसाधन माना गया जो एक विशाल पारिस्थितिक तन्त्र का एक भाग भी है। हमारी राष्ट्रीय जल नीति के प्रमुख बिन्दु और मार्गदर्शक सिद्धान्त इस प्रकार हैं :–

- राष्ट्रीय जल नीति में देश में उपलब्ध जल संसाधनों को राष्ट्रीय सन्दर्भों में विकसित करने, संरक्षण करने तथा उनके समुचित उपयोग और प्रबन्धन के लिए सभी आवश्यक कदम उठाने पर बल दिया गया है।
- देश में उपलब्ध जल संसाधनों के अधिकतम् और उपयुक्त उपयोग को सुनिश्चित करने

हेतु उपयुक्त प्रकार के संगठनों और इकाइयों को स्थापित किया जाएगा।

- देश के विभिन्न क्षेत्रों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर जल की कमी वाले क्षेत्रों में दूसरे क्षेत्रों से जल ट्रान्सफर करने का समुचित प्रबन्ध किया जाएगा।
- जल संसाधनों के विकास के अन्तर्गत जल का चक्रीकरण तथा पुनःप्रयोग एक अनावश्यक पहलू समझा जाएगा और इसे प्राथमिकता दी जाएगी।
- जहां तक सम्भव होगा जल संसाधनों के विकास से सम्बन्धित परियोजनाओं की बहुद्देशीय परियोजनाओं के रूप में नियोजित और विकसित करने का प्रयास किया जाएगा जिसमें पेयजल की व्यवस्था को प्राथमिकता दी जाएगी।
- जल संसाधनों के विकास से सम्बन्धित परियोजनाओं का सम्बन्धित क्षेत्रों में वहां के मानव जीवन, मानव बस्तियों, मानव व्यवसाय के साथ–साथ आर्थिक एवं सामाजिक विकास आदि पर उनके पड़ने वाले प्रभावों को और पर्यावरण, पारिस्थितिक सन्तुलन तथा स्थानिक परिस्थितियों को भी ध्यान में रखकर ही उन्हें अन्तिम रूप दिया जाएगा।
- जल विकास की परियोजनाओं को विशेष रूप से जनजातीय क्षेत्रों, अनुसूचित जातियों तथा अन्य निर्बल वर्गों, से आच्छादित क्षेत्रों में लगाने को प्राथमिकता दी जाएगी।
- जल के भण्डार/बांधों तथा अन्य स्ट्रक्चर्स की सुरक्षा व्यवस्था सुनिश्चित करने के लिए राष्ट्रीय तथा राज्य स्तर पर समुचित संगठनात्मक प्रबन्ध किए जाएंगे तथा एक निश्चित और निर्धारित अवधि में उनकी विशेषज्ञों के माध्यम से समीक्षा का प्रबन्ध किया जाएगा।
- भूमिगत जल संसाधनों का निश्चित अन्तराल पर वैज्ञानिक रीति से आकलन किया जाएगा जिसमें जल की गुणवत्ता तथा आर्थिक रूप से लाभ–लागत विश्लेषण को भी ध्यान में रखा जाएगा।
- भूमिगत जल का उपयोग इस तरह तथा इस सीमा तक सुनिश्चित किया जाएगा जिसमें उसके रिचार्जिंग की अधिक से अधिक सम्भावनाएं रहें जिससे उसको अधिक से अधिक समय तक सुरक्षित रखा जा सके।
- जल नीति में जल संसाधनों के नियोजन, विकास और उपयोग में प्राथमिकताओं का क्रम निम्न प्रकार निर्धारित किया गया है जैसे :–

प्रथम वरीयता	पेयजल
द्वितीय वरीयता	सिंचाई
तृतीय वरीयता	जल विद्युत
चतुर्थ वरीयता	नौकायन
पंचम वरीयता	औद्योगिक तथा अन्य प्रयोग

यूनेस्को की एक ताजा रिपोर्ट के अनुसार पृथ्वी पर जल की कुल मात्रा का 97.2 प्रतिशत समुद्रों में समुद्री जल के रूप में, 2.2 प्रतिशत हिम नदियों और हिम शिखरों में बर्फ के रूप में, 0.6 प्रतिशत भूमिगत और धरातल पर मृदु जल के रूप में उपलब्ध है। इस प्रकार पृथ्वी पर पाए जाने वाले कुल जल का 0.6 प्रतिशत भाग ही, मानव प्रयोग हेतु मृदु जल के रूप में मिलता है।

- सतही तथा भूमिगत दोनों प्रकार के जल की गुणवत्ता की नियमित समीक्षा की व्यवस्था की जाएगी और तद्नुसार इसकी गुणवत्ता में सुधार लाने हेतु कार्यक्रमों को चरणबद्ध रूप में चलाया जाएगा।
- देश में जल क्षेत्रों की पहचान कर उन्हें समुचित प्रकार से वर्गीकृत करके उनके आधार पर ही जल की उपलब्धता को ध्यान में रखते हुए क्षेत्र–विशेष में आर्थिक गतिविधियों जैसे कृषि, उद्योग तथा शहरी विकास की योजनाएं बनाई जाएंगी और उन्हें क्रियान्वित किया जाएगा।
- देश के विभिन्न भागों में जल के उचित उपयोग को सुनिश्चित करने हेतु तथा जल के सीमित संसाधन सम्बन्धी जानकारी को सभी लोगों को प्रदान करने हेतु जन–जागरण अभियान चलाया जाएगा तथा जल संरक्षण की भावना को विकसित करने हेतु शिक्षा, कानून, पारितोषक तथा दण्ड का सहारा लिया जाएगा।
- जल नीति में देश के विभिन्न भागों में प्रत्येक बाढ़ सम्भावित क्षेत्र के लिए नियंत्रण और प्रबन्धन के लिए "मास्टर प्लान" बनाने की आवश्यकता पर बल दिया गया है ताकि बाढ़ सहायता पर नियमित रूप से किए जाने वाले भार को कम किया जा सके।
- देश में जल संसाधन विकास के लिए एक नियमित एवं सुव्यवस्थित दीर्घकालीन प्रशिक्षण व्यवस्था अपनाने पर भी हमारी जल नीति में जोर दिया गया है। इस प्रशिक्षण में सूचना प्रणाली, क्षेत्रीय नियोजन, परियोजना नियोजन एवं परियोजना निर्माण, परियोजना प्रबन्धन, परियोजनाओं का क्रियान्वयन तथा जल वितरण प्रणाली के समुचित प्रबन्धन आदि विषयों को सम्मिलित करते हुए जल संसाधनों के नियोजन और प्रबन्धन से सम्बन्धित सभी लोगों को समय–समय पर प्रशिक्षित किए जाने पर बल दिया गया है।

इस प्रकार हमारी जलनीति में जल को मानव–जीवन तथा पशुओं के लिए, पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने के लिए, आर्थिक तथा अन्य सभी विकासात्मक गतिविधियों को संचालित करने और जल की निरंतर कमी होते जाने के कारण इसके उपयोग की उपयुक्त, सर्वहितकारी तथा मितव्ययी योजनाओं का समुचित प्रकार से नियोजन तथा प्रबन्धन किया जाना अपरिहार्य समझा गया है और देश के सभी भागों में जल के समुचित उपयोग को सुनिश्चित करने, इसे प्रदूषण से बचाने तथा इसकी गुणवत्ता सुनिश्चित करने जैसी सभी आवश्यक व्यवस्थाएं करना आवश्यक बताया गया है। सरकारी तौर पर तो इनमें से कुछ व्यवस्थाएं भी की गई हैं, कुछ को किए जाने के प्रयास किए

जा रहे हैं लेकिन सच्चाई यह है कि इस जल–नीति में जिन व्यवस्थाओं और कार्यक्रमों को लागू करके देश के जल संसाधनों के उपयुक्तम और व्यापक प्रयोग की संकल्पना की गई है उन्हें उस रूप में लागू किया जाना अभी तक सम्भव नहीं हो पाया है। अतः अब गम्भीरतापूर्वक इन प्रावधानों को लागू किया जाना नितान्त रूप से आवश्यक है अन्यथा देर हो जाएगी और बाद में पछताने के अलावा और कुछ हाथ नहीं लगेगा।

हमारे जल संसाधन और उनमें प्रदूषण की स्थिति

जनसंख्या के बढ़ते दबाव और आधुनिक वैज्ञानिक युग में लोगों के जीवन स्तर में हो

वर्तमान में देश में वार्षिक तौर पर 4.5 करोड़ हेक्टेयर मीटर भूमिगत जल उपलब्ध है जिसमें से केवल 70 लाख हेक्टेयर मीटर पीने के लिए, उद्योगों के लिए तथा अन्य कार्यों हेतु प्रयोग किया जा रहा है शेष लगभग 3.8 करोड़ हेक्टेयर मीटर भूमिगत जल अभी प्रयोग किया जा सकता है।

रहे सुधार के फलस्वरूप जल की खपत संसार के लगभग सभी देशों में तेजी से बढ़ रही है। साथ ही साथ बढ़ते औद्योगीकरण और पर्यावरण प्रदूषण से उपलब्ध जल का बहुत बड़ा भाग उपयोग योग्य नहीं रह जाने के कारण सतही जल की तुलना में भूमिगत जल पर निर्भरता अधिक बढ़ी है। पृथ्वी के अन्दर जल स्तर में निरन्तर हो रही गिरावट ने भूमिगत जल स्रोतों को भविष्य के लिए सुरक्षित रखने हेतु सोचने के लिए मजबूर किया है। इससे पहले कि भविष्य में जल संकट मानव–जाति के लिए एक विकट समस्या बने, एक चुनौती के रूप में स्वीकार कर इसके लिए दूरगामी योजना बनाना और उसका क्रियान्वयन अपरिहार्य होगा।

जल संसाधन के सन्दर्भ में हमारा देश संसार के गिने–चुने सम्पन्न देशों में आता है, भले ही हम उपलब्ध जल का अनुकूलतम उपयोग नहीं कर पा रहे हैं। वर्तमान में देश में वार्षिक तौर पर 4.5 करोड़ हेक्टेयर मीटर भूमिगत जल उपलब्ध है जिसमें से केवल 70 लाख हेक्टेयर मीटर पीने के लिए, उद्योगों के लिए तथा अन्य कार्यों हेतु प्रयोग किया जा रहा है। शेष लगभग 3.8 करोड़ हेक्टेयर मीटर भूमिगत जल अभी प्रयोग किया जा सकता है। यद्यपि इसकी गहराई निरन्तर बढ़ती जा रही है। विभिन्न राज्यों में भूमिगत जल की स्थिति तालिका–2 में दर्शाई गई है। भूमिगत जल के अतिरिक्त सतही जल भी देश में काफी मात्रा में उपलब्ध है लेकिन इसका वास्तविक उपयोग बहुत कम है। साथ ही इसका 70 प्रतिशत भाग तो बुरी तरह प्रदूषित हो चुका है।

देश के विभिन्न भागों में भूमिगत जल काफी मात्रा में प्रदूषित हो चुका है। इस प्रदूषण के लिए कई प्रकार के छोटे–बड़े उद्योग उत्तरदायी हैं, जैसे – राजस्थान के जोधपुर, पाली, बोलोतरा के लघु उद्योग क्षेत्र में लगभग 1,500 छपाई के केन्द्र प्रतिदिन 1.5 करोड़ लीटर गन्दा जल खुली नालियों, नदियों एवं तालाबों में छोड़ देते हैं। इस क्षेत्र की मिट्टी रेतीली है इसलिए जल के साथ विषैले रासायनिक कण भी छन–छन कर तालाबों, जलाशयों, कुओं आदि में मिलते रहते हैं। चूंकि इस जल का उपयोग इस क्षेत्र में रहने वाले लगभग 10 लाख लोग करते हैं अतः वे कई प्रकार की बीमारियों के शिकार होने के लिए विवश हैं। इस दूषित जल का कुप्रभाव पशुओं एवं फसलों पर भी पड़ रहा है। इसी प्रकार तमिलनाडु में चर्मशोधक कारखाने, केरल में नारियल रेशा उद्योग भी भूमिगत जल को प्रदूषित कर रहे हैं। हाल ही में उत्तर प्रदेश में भी कुछ क्षेत्रों में वहां के भूमिगत जल में रेडियो–धर्मी पदार्थ पाये गये हैं जिनका कुप्रभाव वहां रहने वाले लोगों और पशुओं के स्वास्थ्य पर पड़ रहा है और आने वाले समय में यह प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगेगा। गाजीपुर, बलिया, जौनपुर, मिर्जापुर आदि जनपदों के भूमिगत जल में नाइट्रोजन, पोटेशियम, फास्फेट, मैंगनीज एवं सीसा जैसी विषाक्त धातुएं भी पर्याप्त मात्रा में पाई गई हैं जो भूमिगत जल के विषाक्त होने के प्रमाण हैं। इसी प्रकार दिल्ली में भी पर्याप्त मात्रा में भूमिगत जल प्रदूषित हो गया है जो वहां तेजी से बढ़ती आबादी और तीव्र गति तथा अनियन्त्रित और अनियोजित प्रकार से हो रहे औद्योगीकरण के परिणाम हैं। यहां विभिन्न प्रकार के उद्योगों से निकला हुआ कूड़ा–कचरा बिना उपचारित किए ही ढेर के रूप में या फिर नदी में सीधे ही प्रभावित कर दिए जाने से स्थिति बिगड़ रही है।

हाल ही में किए गए एक शोध अध्ययन के अनुसार पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में भूमिगत जल के प्रदूषण में अप्रत्याशित रूप से वृद्धि हो रही है जो इस बात का द्योतक है कि फसलों की पैदावार बढ़ाने के लिए जो यहां प्रति हेक्टेयर सर्वाधिक रासायनिक खाद, कीटनाशक आदि प्रयोग किए जाते रहे हैं, यह उसी का परिणाम है।

देश के विभिन्न भागों में स्थापित ताप विद्युत गृह भी भूमिगत जल को विषाक्त करने में अपनी भूमिका रखते हैं। इन विद्युत गृहों से प्रतिदिन लाखों टन राख निकलती है और उपयोग के अभाव में वह सालों–साल तक ऐसे ही जमीन पर बेकार पड़ी रहती है। इस राख में भी अनेक भारी धातुएं मिली रहती हैं जो धीरे–धीरे जमीन के अन्दर प्रवेश कर जाती हैं और इससे आस–पास का भूमिगत जल विषाक्त हो जाता है। देश में फैले ताप विद्युत गृहों से निकलने वाली राख के पड़े रहने के फलस्वरूप काफी भूभाग का जल विषाक्त हो रहा है। अतः इस प्रकार की राख

तालिका – 2
विभिन्न राज्यों में भूगर्भीय जल का विवरण

क्रं. सं.	राज्य	पुनः पूर्ति योग्य भूगर्भीय जल की मात्रा (मिली. हेक्टे. मीटर प्रतिवर्ष)			
		कुल मात्रा (घन किमी.)	घरेलू और औद्योगिक उपयोग हेतु उपलब्धता (घन मी./वर्ष)	कृषि उपयोग हेतु उपलब्धता (घन किमी.)	भूमिगतजल विकास का स्तर (प्रतिशत) (घन मी./वर्ष)
1.	आन्ध्र प्रदेश	3.52	0.52	2.10	23.6
2.	अरुणाचल प्रदेश	0.14	0.02	0.12	–
3.	असम	2.47	0.37	2.10	4.5
4.	बिहार	3.35	0.50	2.84	19.2
5.	गोवा	0.02	0.003	0.01	8.3
6.	गुजरात	2.03	0.30	1.73	41.5
7.	हरियाणा	0.85	0.12	0.72	83.9
8.	हिमाचल प्रदेश	0.03	0.007	0.03	18.1
9.	जम्मू कश्मीर	0.04	0.06	0.37	1.3
10.	कर्नाटक	1.61	0.24	0.37	31.2
11.	केरल	0.79	0.13	0.65	15.3
12.	मध्य प्रदेश	5.08	0.76	4.32	16.5
13.	महाराष्ट्र	3.78	1.24	2.24	30.4
14.	मणिपुर	0.31	0.05	0.27	बहुत कम
15.	मेघालय	0.05	0.008	0.05	बहुत कम
16.	मिजोरम	आ. उपलब्ध नहीं	–	–	–
17.	नगालैण्ड	0.07	0.01	0.06	बहुत कम
18.	उड़ीसा	2.00	0.30	1.70	8.4
19.	पंजाब	1.86	0.18	1.68	93.8
20.	राजस्थान	1.27	0.20	1.07	50.6
21.	सिक्किम	आ. उपलब्ध नहीं	–	–	–
22.	तमिलनाडु	2.63	0.40	2.24	60.4
23.	त्रिपुरा	0.06	0.01	0.05	33.4
24.	उत्तर प्रदेश	8.38	1.26	7.12	37.6
25.	पश्चिमी बंगाल	2.30	0.34	1.96	24.2
	सभी केन्द्र शासित प्रदेश	0.04	0.02	0.007	15.5
	समस्त भारत	43.18	7.09	38.08	31.02

के शीघ्र निस्तारण हेतु प्रयास किए जाने की आवश्यकता है।

देश में खाद्यान्न उत्पादन की बढ़ोतरी के उद्देश्य से कृषि क्षेत्र में हुई हरित क्रान्ति के फलस्वरूप अधिक पैदावार देने वाली तथा शीघ्र उत्पादन वाली फसलों को लेने हेतु रासायनिक खादों, कीटनाशकों तथा खरपतवार नाशक दवाओं का अंधाधुन्ध प्रयोग किया जा रहा है। ये सभी पदार्थ धीरे–धीरे मिट्टी में प्रवेश कर भूमिगत जल को प्रदूषित कर रहे हैं। उल्लेखनीय है कि कृषि में प्रयोग किए जा रहे रासायनिक खादों का 50 प्रतिशत अंश ही फसलों को पोषण प्रदान करता है और 25 प्रतिशत भाग मिट्टी में मिलकर नाइट्रोजन गैस में परिवर्तित हो जाता है। शेष 25 प्रतिशत भाग मिट्टी में रिस–रिस कर भूमिगत जल में मिल जाता है जो भूमिगत जल के प्रदूषण का कारण बनता है। हाल ही में किए गए एक शोध अध्ययन के अनुसार पंजाब के ग्रामीण क्षेत्रों में भूमिगत जल के प्रदूषण में अप्रत्याशित रूप से वृद्धि हो रही है जो इस बात का द्योतक है कि फसलों की पैदावार बढ़ाने के लिए जो यहां प्रति हेक्टेयर सर्वाधिक रासायनिक खाद, कीटनाशक आदि प्रयोग किए जाते रहे हैं, यह उसी का परिणाम है।

इससे स्पष्ट है कि प्रदूषित जल के कारण दिन प्रतिदिन नई–नई समस्याएं पैदा हो रही

हैं और अभी से ही यदि भविष्य में होने वाले जल उपयोग की तरफ ध्यान नहीं दिया गया तो वह दिन दूर नहीं जब पूरे देश में हर जगह पानी का अकाल पड़ सकता है। अतः अब वह समय आ गया है जब सरकार के साथ–साथ हम सभी को मिलकर आने वाली पीढ़ियों के लिए जल की उपलब्धता सुनिश्चित करनी होगी और इसके लिए भूमिगत जल के साथ–साथ समुद्रों, नदियों, तालाबों आदि सभी के जल को प्रदूषण मुक्त करने हेतु अपने स्तर से सभी आवश्यक कदम उठाकर, जल के अन्धाधुन्ध उपयोग पर अंकुश अथवा बर्बादी को रोककर जल के स्रोतों को आवश्यक संरक्षण प्रदान करके सरकारी प्रयासों के साथ–साथ प्रत्येक देशवासी को अपना सक्रिय सहयोग प्रदान करना होगा तभी हम भविष्य में आ सकने वाले जल संकट का सामना करने में सक्षम हो सकेंगे।

वर्षा का जल और उसका उपयोग

भूमिगत जल की स्थिति के अतिरिक्त देश में वर्षा से प्राप्त होने वाले जल की स्थिति का यदि अवलोकन करें, जो भूमिगत जल के उन्नयन का स्रोत है, तो पता चलता है कि वर्षा से हमारे देश में लगभग 70 हजार एकड़ घन मीटर जल प्रतिवर्ष प्राप्त होता है अर्थात यदि वर्षा से प्राप्त होने वाला ही कुल जल रोक लिया जाए तो 70 करोड़ एकड़ भूमि पर एक मीटर जल खड़ा हो जायेगा। अरबों रुपये खर्च करने के बाद अनेक बड़ी और छोटी योजनाएं बनाकर हम अब तक केवल 4 करोड़ एकड़ घनमीटर जल का उपयोग कर सके हैं। वर्षा से प्राप्त जल बाढ़ की स्थिति पैदा करता हुआ, गांव के गांव जलमग्न करता हुआ, भयंकर विनाशलीला करता हुआ न केवल समुद्र में पहुंचकर खारा हो जाता है बल्कि कृषि भूमि की उपजाऊ परत को बहाकर समुद्र में उड़ेल देता है। सतही जल के रूप में अभी भी देश में लाखों एकड़ में कई प्राकृतिक जलाशय, झीलें और लाखों किलोमीटर लम्बे नाले मौजूद हैं। अकेले उत्तर प्रदेश में 35 लाख एकड़ में फैले 1 लाख 35 हजार जलाशय और झीलें हैं। सोलह सौ बरसाती नाले 20 हजार किलोमीटर लम्बाई में फैले हैं। इन सभी संसाधनों का यदि वैज्ञानिक ढंग से उपयोग किया जाए तो काफी हद तक जल की समस्या पर काबू पाया जा सकता है और भूमिगत जल के दिनों–दिन नीचे जा रहे स्तर को भी ऊपर उठाया जा सकता है।

भूमिगत जल स्तर के निरंतर नीचे जाने का मुख्य कारण हमारी उस पर अत्यधिक निर्भरता है क्योंकि सतही जल का हम न तो भली भांति उपयोग ही कर पा रहे हैं और न ही वह अब प्रदूषित हो जाने के कारण उपयोग योग्य रह गया है। अतः भारत में विश्व का सर्वाधिक भूमिगत जल अर्थात 150 अरब घन मीटर प्रतिदिन निकाला जाता है। देश में कृषि, उद्योग और घरेलू उपयोग हेतु जल की बढ़ती मांग की पूर्ति हेतु 1970 से प्रतिवर्ष लगभग पौने दो लाख ट्यूबवेल लगाए जा रहे हैं जिससे जल स्तर में गिरावट आना नितान्त स्वाभाविक है। विश्व के अनेक देशों की भांति भारत ने पिछले दशकों में देश की जनता को स्वच्छ जल उपलब्ध कराने हेतु अनेक योजनाएं और कार्यक्रम प्रारम्भ किए हैं। विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में देश में शत–प्रतिशत लोगों को शुद्ध पेयजल उपलब्ध कराने को सरकार द्वारा प्राथमिकता दी गई है। पेयजल की उपलब्धता के विषय में देश के अधिकांश क्षेत्रों में स्थिति बहुत अच्छी नहीं है। इस स्थिति के लिए कई कारण उत्तरदायी हैं जिनमें तेजी से बढ़ती जनसंख्या, बढ़ता शहरीकरण, सतही जल का अनुकूलतम उपयोग न कर पाना, असन्तुलित औद्योगीकरण, बढ़ता प्रदूषण, मौजूदा कानूनों पर अमल न होना, जन–चेतना का अभाव आदि प्रमुख हैं।

इस सम्बन्ध में एक विशेष तथ्य उल्लेखनीय है कि भारत में पेयजल की समस्या की गम्भीरता को इसकी आपूर्ति और वितरण सम्बन्धी अव्यवस्था ने और भी अधिक विकट रूप प्रदान किया है। वास्तव में पेयजल की समस्या जनसंख्या में विस्फोट के बाद दूसरी सर्वाधिक गम्भीर समस्या है। इस समस्या से यदि समय रहते नहीं निपटा गया तो परिणाम अत्यन्त भयावह और आत्मघाती हो सकते हैं। निरन्तर लुप्त होते जा रहे जल स्रोतों और जल स्रोतों में बढ़ते प्रदूषण ने इस समस्या को आज बहुआयामी रूप दे दिया है जिसे प्राथमिकता के आधार पर हल किया जाना आवश्यक है।

जल समस्या के निराकरण के उपाय

इस दिशा में वांछित उद्देश्यों की पूर्ति हेतु केवल सरकारी प्रयासों से काम चलने वाला नहीं है बल्कि इस हेतु अब बहुस्तरीय प्रयास किए जाने आवश्यक हो गए हैं। उद्योगों द्वारा जल स्रोतों के लिए किए जा रहे अनियन्त्रित दोहन को रोकना एवं उनके द्वारा औद्योगिक कचरे को जल स्रोतों में मिलाने से रोकने हेतु प्रभावी कदम उठाना नितान्त रूप से अपरिहार्य है। इस सम्बन्ध में देश में यद्यपि कानून भी मौजूद हैं लेकिन आवश्यकता है उनके प्रभावी क्रियान्वयन की। सच्चाई यह है कि इन कानूनों में कमियां होने और इनके अव्यावहारिक होने के कारण इनका भली–भांति क्रियान्वयन नहीं हो सका है और ये पूरी तरह से निष्क्रिय साबित हुए हैं। वनों की अन्धाधुन्ध कटाई को रोका जाना और भूमिगत जल के अन्धाधुन्ध दोहन और जल के अवांछनीय प्रयोग को रोकने हेतु जन–सामान्य को जानकारी देना भी अब अधिक प्रासंगिक हो गया है। अभी तक लोगों को इस विषय में समुचित और तथ्यपरक जानकारी उपलब्ध नहीं है। वे सूखे और अकाल की स्थितियों में प्रकृति को दोषी मानते हैं, इन्हें दैवीय प्रकोप समझते हैं। वैज्ञानिक जानकारी के अभाव में वे जल के दुरुपयोग को रोकने के लिए प्रभावी कदम भी नहीं उठा पाते। इसके अतिरिक्त वर्तमान परिस्थितियों में अब भूमिगत जल के विकल्पों की खोज किया जाना भी अत्यावश्यक हो गया है। इसके विकल्प के रूप में वर्षा से प्राप्त जल को जलाशयों में एकत्रित कर उसका अधिकाधिक प्रयोग करना, तालाबों, झीलों और नदियों में उपलब्ध जल को प्रदूषित होने से बचाकर उसका अधिकतम उपयोग करना भी इस दिशा में एक उपयोगी प्रयास होगा जो एक दूरदर्शितापूर्ण नीति बनाकर, सरकारी और गैर सरकारी संगठनों तथा त्रिस्तरीय पंचायतों के समन्वित प्रयासों और इस दिशा में जनचेतना विकसित करके पूरा किया जा सकता है। ❑

वर्षा के पानी का उपयोग

नवीन पंत

पानी ही जीवन है। पानी के अभाव में जीवन का विकास नहीं हो सकता। सृष्टि की रचना नहीं हो सकती। हमारी धरती में समुद्री पानी के रूप में काफी पानी है लेकिन इस पानी में नमक का अंश इतना अधिक है कि इसे पीने और सिंचाई के काम में नहीं लाया जा सकता।

सूरज की किरणें जब समुद्र के जल और अन्य पानी पर पड़ती हैं तो वह उसके कुछ अंश को वाष्प का रूप देती हैं। यह वाष्प बादल बन कर विश्व के विभिन्न भागों में बारिश कराते हैं। बारिश का यह पानी हमारे लिए शुद्ध जल का सबसे बड़ा साधन है। उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव और विश्व की ऊंची पर्वतमालाएं बर्फ से ढकी हैं। कुछ स्थानों पर बर्फ की तह काफी गहरी हैं। इन स्थानों पर इतनी सर्दी पड़ती है कि यहां बारिश नहीं होती, बर्फ गिरती है। सूरज की गर्मी से यह बर्फ पिघलती है। यह पिघली बर्फ हिमनदों का रूप लेकर धीरे–धीरे नदियों में बदल जाती है।

किसी समय विश्व की जनसंख्या कम थी और सभी लोगों की आवश्यकता पूरी करने के लिए पर्याप्त मात्रा में शुद्ध जल उपलब्ध था। लेकिन तब भी पानी का महत्व कम नहीं था। कृषि भूमि को सिंचाई सुविधा देने के लिए लड़ाइयां होती थीं। अब विश्व की निरन्तर बढ़ती जनसंख्या की वजह से पानी की कमी महसूस की जा रही है। कुछ विशेषज्ञों का तो यहां तक कहना है कि अगर समय रहते पानी के संग्रह, उचित उपयोग, पुनः प्रयोग और बेहतर इस्तेमाल के कारगर उपाय नहीं किए गए तो अगला महायुद्ध पानी के लिए हो सकता है।

भारत में जल की स्थिति

हमारे देश के सभी भागों में समान रूप से

वर्षा के पानी के संग्रह से बना जलाशय

वर्षा नहीं होती। दक्षिण की नदियों को 90 प्रतिशत जल और उत्तर की नदियों को 80 प्रतिशत जल जून से सितम्बर तक के चार महीनों में प्राप्त होता है। इससे मानसून के महीनों में पानी की प्रचुरता और गर्मियों में पानी की कमी होती है। देश के लगभग सभी क्षेत्रों में मानसून के महीनों के दौरान काफी पानी उपलब्ध होता है। इस पानी का भंडारण करके बाढ़ और सूखे की समस्या का सामना किया जा सकता है।

शहरों की जनसंख्या में वृद्धि और उनके विस्तार के कारण हमारे अनेक नगर पानी की समस्या का सामना कर रहे हैं। गर्मियों में यह समस्या अधिक उग्र हो जाती है। सिंचाई, औद्योगिक कार्यों, सफाई आदि में पानी का अंधाधुंध प्रयोग करने से भूमिगत जल के स्तर में कमी हो रही है। औद्योगिक कचरे में विषैले रसायनों की उपस्थिति से नदियों, झीलों और सरोवरों का पानी प्रदूषित हो रहा है। शहरीकरण से यह समस्या और भी उग्र हो गई है।

शहरीकरण और शहरों के क्षेत्र में विस्तार से बारिश का पानी जमीन के नीचे नहीं पहुंचता है। वह नालियों–नालों में होकर बह जाता है। शहरों में आवासीय बस्तियों, पक्की सड़कों आदि के निर्माण के बाद बहुत कम क्षेत्र खुला रहता है। एक सरकारी अनुमान के अनुसार राजधानी दिल्ली की छतों का क्षेत्रफल लगभग 138 वर्ग किलोमीटर है। ये छतें वर्षा का 6.8 करोड़ घनमीटर जल प्राप्त करती हैं। इस समय यह सारा पानी नालियों–नालों में होकर यमुना में बह जाता है। अगर इसमें से केवल 10 प्रतिशत का संग्रह करके उसे जमीन के अन्दर पहुंचा दिया जाए तो गर्मियों में उपयोग किया जा सकता है।

सिंचाई, पीने के पानी और उद्योगों के लिए पानी की जरूरत बढ़ गई है। कुछ किस्म की फसलें जैसे कि गन्ने की खेती ज्वार, बाजरे, मक्का आदि मोटे अनाजों की तुलना में बहुत अधिक पानी लेती हैं। अधिकांश स्थानों पर सभी किस्म के अतिरिक्त पानी की यह जरूरत कुंओं, नल कूपों के जरिये भूमिगत जल से पूरी की जाती है। इसके कारण कई स्थानों पर भूमिगत जल का स्तर बहुत नीचे चला गया है और कुछ स्थानों पर गर्मियों में कुएं सूख भी जाते हैं। भूमिगत जल का अंधाधुंध इस्तेमाल करने पर उसका, पानी की गुणवत्ता पर भी असर पड़ता हैं।

स्थिति से निपटने के उपाय

जनसंख्या वृद्धि, शहरीकरण और औद्योगीकरण के कारण यह समस्या दिनों दिन जटिल हो रही है। इस स्थिति पर काबू पाने के लिए आवश्यक है कि पानी की एक–एक बूंद की रक्षा की जाए और उसका सोच समझ कर उपयोग किया जाए। अब तक बारिश के पानी को नालियों–नालों के जरिये बहने दिया जाता था। जब तक जनसंख्या कम थी और देश के 40–50 प्रतिशत क्षेत्र में वन थे, चिन्ता की कोई बात नहीं थी। बारिश का अधिकांश पानी स्वतः जमीन के भीतर चला जाता था। लेकिन वन क्षेत्र में अत्यधिक कमी आने से अब स्थिति अत्यन्त चिन्तनीय हो गई है। अब वक्त की मांग है कि बारिश के पानी का संग्रह करके उसे धरती के भीतर पहुंचाया जाए। यह कार्य ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में किया जाना चाहिए।

देश के कुछ क्षेत्र प्रति वर्ष अतिवृष्टि और अनावृष्टि से पीड़ित रहते हैं। जहां देश के एक भाग में अतिवृष्टि और बाढ़ के कारण किसानों के घर, खेत, खलिहान सभी पानी में डूब जाते हैं, देश के दूसरे भाग में भयंकर सूखे के कारण किसानों की फसल मारी जाती है, उनके जानवरों के लिए घास उपलब्ध नहीं होती और पीने के पानी की समस्या पैदा हो जाती है। अगर पानी का युक्तिसंगत ढंग से उपयोग, संग्रह और संरक्षण किया जाए तो बाढ़ और सूखे की समस्या को आंशिक रूप से हल किया जा सकता है।

सभी नालियों–नालों का पानी नदियों में गिरने से बाढ़ की समस्या उग्र हो जाती है। बाढ़ काफी बड़े इलाके में तबाही मचाती है। बाढ़ की मार सबसे गरीब तबके पर अधिक पड़ती है। अगर बरसात के पानी का छोटे–छोटे तालाब, सरोवर और बांध बनाकर संग्रह कर लिया जाए और उसे जमीन के भीतर पहुंचा दिया जाए तो बाढ़ की तबाही पर काफी नियंत्रण किया जा सकता है।

इससे ये इलाके हरे–भरे हो जाएंगे। कुंओं का जल स्तर नीचे नहीं जाएगा। जानवरों के लिए काफी मात्रा में घास उपलब्ध होगी। किसानों को अपनी फसल के लिए पानी मिलेगा और गांव की औरतों को पीने के पानी की कमी की समस्या से नहीं जूझना पड़ेगा।

पानी की कमी मनुष्यों और जानवरों दोनों को कष्ट देती है। पानी की कमी के कारण पर्यावरण को क्षति पहुंचती है और मनुष्यों और जानवरों दोनों को तकलीफ उठानी पड़ती है।

एक ओर गन्दे नालों की संख्या में वृद्धि, नगरपालिकाओं की जल–मल निकासी व्यवस्था, औद्योगिक कचरे और विषैले रसायनों से युक्त कचरे को नालियों–नालों में बहा देने, कृषि रसायनों और कीटनाशक दवाओं के प्रयोग से अच्छे किस्म का पानी दुर्लभ होता जा रहा है, दूसरी ओर जल स्रोतों–साधनों की रक्षा की ओर पर्याप्त ध्यान न देने से देश के सीमित जल साधन तेजी से लुप्त हो रहे हैं और उनकी संख्या और गुणवत्ता कम हो रही है। चिन्ता की बात यह है कि अगर हमने जल साधनों का संरक्षण और विकास नहीं किया तो अगले पचास वर्षों में हमें पानी के भीषण अकाल का सामना करना पड़ेगा। पीने का शुद्ध पानी दुर्लभ और बहुत महंगा हो जाएगा।

भविष्य में खतरे के संकेत

स्वतंत्रता के समय देश की जनसंख्या 35 करोड़ थी और प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष पानी की उपलब्धता 5,000 घनमीटर थी। आज देश की जनसंख्या एक अरब से अधिक है इससे प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष पानी की उपलब्धता 1,950 घनमीटर रह गई है। सन 2010 तक यह उपलब्धता 1,000 घनमीटर रह जाएगी। धीरे–धीरे जनसंख्या वृद्धि, जल स्रोतों की उपेक्षा और जीवन स्तर में सुधार के साथ पानी की खपत में वृद्धि के कारण पानी की प्रचुरता पानी की दुर्लभता में बदल रही है।

लेकिन अगर हम अपने जल साधनों का संरक्षण करें और उपलब्ध पानी का उचित ढंग से उपयोग करें तो हमें पानी की कमी का सामना नहीं करना पड़ेगा। अनुमान है कि भारत में प्रति वर्ष 4,000 अरब घनमीटर पानी बरसता है। इसमें से प्रति वर्ष औसतन 1,953 अरब घनमीटर पानी प्रवाहित होता है। शेष पानी वाष्प बन कर उड़ जाता है या जमीन को नम करने के बाद धरती में चला जाता है। इस पानी में से केवल 400 अरब

घनमीटर पानी जमीन की सतह पर और जमीन की सतह के नीचे प्रयुक्त किया जाता है। इस प्रकार हम अभी वर्षा से प्राप्त जल का केवल 10 प्रतिशत पानी का इस्तेमाल करते हैं।

इस दशक के अन्त तक जब देश की जनसंख्या में 20 प्रतिशत की वृद्धि हो जाएगी, हम वर्षा के पानी की वर्तमान जल भंडारण क्षमता में 10 प्रतिशत की वृद्धि भी नहीं कर पाएंगे। वर्षा के पानी का संग्रह करके इसका जमीन के भीतर जाना सुगम बनाकर न केवल बाढ़ और सूखे की समस्या पर नियंत्रण किया जा सकता है बल्कि पर्यावरण की भी रक्षा की जा सकती है। सच तो यह है कि पानी की रक्षा पर्यावरण की रक्षा की ओर पहला कदम है।

पानी की आवश्कयता का आबादी में वृद्धि, बेहतर जीवन की इच्छा, ऊर्जा और खाद्यान्नों की बढ़ती मांग और औद्योगिक उत्पादन से घनिष्ठ संबंध है। इस समय हमें 600 अरब घनमीटर पानी की जरूरत होती है। यह जरूरत वर्तमान जल भंडारों (झीलों, सरोवरों और तालाबों), भूमिगत जल, कुंओं, नलकूपों और नदियों से पानी से पूरी की जाती है।

पचास वर्ष बाद जब भारत की जनसंख्या डेढ़ अरब हो जाएगी हमारी शुद्ध जल की आवश्कयता 1,200 अरब घनमीटर हो जाएगी। दूसरे शब्दों में हम जितना पानी इस समय इस्तेमाल कर रहे हैं उससे दुगुना पानी इस्तेमाल करने लगेंगे। अगर हमने अभी से इस विषय की ओर ध्यान नहीं दिया तो पचास वर्ष बाद हमारी जनता के कुछ वर्गों को मुनासिब दाम पर शुद्ध पीने का पानी उपलब्ध नहीं हो सकेगा।

जल संग्रह के उपाय

बरसात से अतिरिक्त 600 अरब घनमीटर पानी संग्रह करने का कोई सरल कार्य नहीं है। इतना पानी संग्रह करने के लिए हमें लाखों, सरोवर, तालाब, ताल–तलैया, पोखर और कुंड बनाने पड़ेंगे। अपनी छोटी–बड़ी नदियों पर हजारों छोटे–बड़े बांध बनाने पड़ेंगे। इससे भी महत्वपूर्ण यह बात है कि हमें अपनी जनता को यह बताना होगा कि पानी की हर बूंद बहुमूल्य है और उसका उचित उपयोग किया जाना चाहिए। हमें जनता को पानी के भावी अकाल की आशंका और उससे निपटने के उपायों में प्रशिक्षित करना होगा।

जल संग्रह करने के लिए लम्बी–चौड़ी योजनाएं बनाने, तकनीकी सलाह लेने और काफी धन जुटाने की जरूरत नहीं है। इसके लिए ग्रामीणों को सरकार का मुंह ताकने की जरूरत नहीं है। ग्रामीण अपने साधनों और श्रम से इस तरह की जल संग्रह करने की योजनाएं बना और उन्हें कार्यान्वित कर सकते हैं। हमारे पूर्वज छोटे–छोटे तालाब, बांध बनाकर यह काम करते थे। हमें अब उन्हीं के दिखाए रास्ते पर चलना है। इस दिशा में महाराष्ट्र में रालेगांव सिद्धी और राजस्थान में अलवर के लोगों ने अपने साधनों और श्रम से जल संग्रह की अनेक छोटी–छोटी योजनाओं को कार्यान्वित करके अपने क्षेत्र की कायापलट कर दी। उन्हेंाने जलसंग्रह के लिए छोटे–छोटे बांध और सरोवर बनाए। उन्होंने वर्षा के पानी को बहने से बचाया और उसका संग्रह किया। इससे थोड़े ही समय में इस क्षेत्र की उजाड़, ऊसर, सूखी धरती नंदन कानन में बदल गई। जिस स्थान पर पहले घास भी नहीं होती थी वहां फसलें लहलहाने लगीं, अनेक तरह के फलों के वृक्ष फलों से लद गए। पहले गांव के लोगों को जानवरों के लिए घास, खाना पकाने के लिए ईंधन और पीने के पानी की दिक्कत होती थी। पानी के संग्रह की व्यवस्था के बाद अब इस क्षेत्र में ग्रामवासियों ने अपना पंचायती वन लगा दिया है। इस वन में तेजी से बढ़ने वाली प्रजातियों के वृक्ष लगाए गए हैं। ग्रामवासी बारी–बारी से वन की चौकसी करते हैं और सभी ग्रामवासियों को उनके पशुओं के लिए चारा और जलाने के लिए ईंधन उपलब्ध कराने का प्रयास करते हैं। गांव के पीने के पानी की समस्या हल हो गई है। गांव का वातावरण हरा–भरा हो गया है।

इन दोनों स्थानों पर हुए अच्छे कार्य की खबर सुगंध की तरह सर्वत्र फैल गई। पिछले वर्ष मध्य प्रदेश के मंडसौर जिले में भयंकर सूखा पड़ा। पानी के अधिकांश स्रोत सूख गए। तालाबों सरोवरों में मुद्दत से गाद नहीं निकाली गई थी। बारिश के पानी का संग्रह न करने के कारण अधिकांश कुंओं का जलस्तर बहुत नीचे चला गया था और कुछ कुंए सूख गए थे।

इस क्षेत्र के लोग जब सहायता के लिए जिले के कलक्टर से मिले तो उन्होंने लोगों को बताया कि सरकार के पास पैसा नहीं है। कलक्टर ने लोगों को सलाह दी कि वे चन्दे, श्रमदान और सरकारी तकनीकी सहायता से अपने जल स्रोतों का पुनरुद्धार करें। उन्हें फिर से सक्रिय करें। कलक्टर ने पहले क्षेत्र के सभी जलस्रोतों की सूची बनवाई और फिर लोगों से वर्षा शुरू होने से पहले सभी जलस्रोतों की मरम्मत और सुधार का काम अपने हाथ में लेने को कहा। दिकोला गांव ने निवासियों की एक बैठक बुलाई। बैठक में गांव के सरपंच ने 6,500 रुपये देने की घोषणा की। सभी गांव निवासियों ने शक्ति भर चन्दा दिया। कुछ ही देर में एक लाख रुपये की रकम हो गई। इस धन और गांव निवासियों के श्रम दान से सिवना और सोचली नदी के संगम पर सरकारी इंजीनियर की सलाह–निर्देशों के अनुसार पुराने बांध की मरम्मत–सुधार का काम किया गया। सारा कार्य फटाफट हो गया। बांध के निर्माण के बाद इलाके का नक्शा बदल गया। चारों तरफ हरियाली छा गई, निष्क्रिय पड़े गांव के हैंड–पम्प फिर चालू हो गए। अगर बांध का निर्माण सरकारी तरीके से किया जाता तो उसके पर 15 लाख रुपये खर्च आते। अब इस बांध के निर्माण से 700 हेक्टेयर भूमि की सिंचाई की जा रही है।

इस तरह परलिया मारूगांव के लोगों ने चन्दे से 7 लाख रुपये एकत्र करके पानी को बेकार बहने से रोका। बरूजाना गांव के लोगों एक पोखर को झील का रूप दिया।

मंदसौर जिले में अब तक ग्रामवासी पानी के स्रोतों की रक्षा करने और बारिश के पानी का भंडारण करने के लिए साढ़े तीन करोड़ रुपये खर्च कर चुके हैं। इससे 33 झीलों की मरम्मत–सुधार का कार्य किया गया, 166 झीलों, सरोवरों की गाद निकाली गई, छः बांध बनाए गए, 3,447 पोखर सरोवर खोदे गए और वर्षा के जल का संग्रह करके 5,634 हैंड–पम्प फिर से सक्रिय किए गए। इस तरह स्वावलम्बन और मेहनत की राह अपना कर मंदसौर के लोगों ने अपनी भाग्य–रेखा बदल दी। मंदसौर जिले के गांव वासियों की तरह सभी ग्राम वासी आपसी सहयोग और मेहनत से अपनी किस्मत बदल सकते हैं। ❑

गुजरात के गांवों में पीने के पानी की समस्या

शैलेश व्यास*

होली का त्यौहार समाप्त होते ही गर्मी का मौसम प्रारंभ हो गया। गुजरात में तापमान 37 से 38 डिग्री सेंटीग्रेड के आसपास इन दिनों दर्ज किया जा रहा है। पिछली 26 जनवरी को आए विनाशकारी भूकंप के बाद अब जन–जीवन सामान्य होने के साथ ही गुजरात के सौराष्ट्र और कच्छ क्षेत्रों में जल संकट गम्भीर रूप धारण कर रहा है।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी जी की जन्मस्थली पोरबंदर जिले के जमरा गांव की लक्ष्मी को प्रतिदिन छः किलोमीटर दूर पानी लेने के लिए जाना पड़ता है। लक्ष्मी अपने बच्चों की अच्छी तरह देखभाल भी नहीं कर पाती है। कम वर्षा और अकाल के कारण जमरा तथा आसपास के प्रायः गांवों में जल संकट की स्थिति बहुत गम्भीर है। लक्ष्मी जैसी हजारों महिलाएं सर्दी के मौसम में भी पीने के पानी के लिए बड़ी कठिनाई का सामना करती हैं तब गर्मी की ऋतु में स्थिति कितनी भयावह होगी यह सोचकर ही इन लोगों का मन कांपने लगता है। गुजरात के 18,000 गांवों में से 60 प्रतिशत से ज्यादा गांव पीने के पानी की समस्या का गंभीर सामना कर रहे हैं। मध्य तथा दक्षिण गुजरात को छोड़कर पूरे राज्य में कहीं भी बारहमासी नदी न होने के कारण तथा पर्याप्त प्राकृतिक जलाशय न होने के कारण और बार–बार अकाल के कारण गुजरात का 70 प्रतिशत क्षेत्र अकाल जैसी गम्भीर जल समस्या का सामना कर रहा है। कुल बारह हजार गांवों के करीब दो करोड़ लोग लगातार दूसरे वर्ष सूखे की स्थिति का सामना कर रहे हैं।

सौराष्ट्र तथा कच्छ क्षेत्र में 5,124 गांव जल समस्या से बुरी तरह प्रभावित हैं। राजकोट जिले के 861 गांवों, जामनगर के 677, जूनागढ़

* आकाशवाणी संवाददाता, राजकोट

के 1,040, पोरबंदर के 1,861, भावनगर के 795, अमरेली के 616 तथा कच्छ के 949 गांवों के लोग जल समस्या से जूझ रहे हैं।

पिछले वर्ष की वर्षा के आकलन से पता चलता है कि प्रति दूसरे वर्ष कम वर्षा से अकाल की स्थिति उत्पन्न हुई है। औसत 5 से.मी. (2 इंच) से 40 से.मी. (15 इंच) तक की बारिश होने से न तो जलाशय ठीक से भर पाते हैं और न भूतल में पानी उतरता है। इजरायल जैसे कम वर्षा वाले देश ने कम पानी में ज्यादा उत्पाद लेने में समूचे विश्व में श्रेष्ठ उदाहरण प्रस्तुत किया है। सौराष्ट्र तथा गुजरात के गांववासी इतनी कठिनाई का सामना कर रहे हैं लेकिन संरक्षण के क्षेत्र में इजरायल जैसी पद्धति अपनाने में कोई कोशिश नहीं की गई।

राजकोट, जामनगर, जूनागढ़, भावनगर, अमरेली, सुरेन्द्रनगर के सीमावर्ती कच्छ के कुल मिलाकर सात हजार गांव पीने के पानी की विकट समस्या का सामना कर रहे हैं। गोंडल, जूनागढ़, अमरेली, भावनगर के निवासियों ने पानी की समस्या से त्रस्त होकर जन आंदोलन शुरू कर दिया है। नगरपालिका, जिला परिषदों, तालुका परिषदों के कार्यालयों में धरना, सूत्रोचार, रास्ते रोकना आदि घटनाएं सामान्य होती जा रही हैं।

प्रशासन ने इस वर्ष 15 मार्च से राहत कार्यों की शुरूआत कर दी है। राजकोट जिले में 75 राहत कार्यों पर 25 हजार से ज्यादा श्रमिकों को रोजगार दिया जा रहा है। राज्य सरकार ने एक निर्णय करके भूकंप पीड़ित क्षेत्रों में मलबे दूर करने के कार्य को राहत कार्यों में गिन कर और रोजगार उपलब्ध करवाने के कार्य को गति दे दी है।

एक ओर जल समस्या अति गंभीर रूप धारण कर रही है तो दूसरी ओर राज्य सरकार ने पाइप लाइन तथा अन्य स्रोतों से पानी पहुंचाने की अपनी प्रतिबद्धता प्रदर्शित की है। करीब 1,500 करोड़ रुपये की महत्वाकांक्षी मही नदी संबंधित पाइप लाइन डालने का कार्य संपन्न हो गया है। डेढ़ हजार किलोमीटर लगी यह पाइप लाइन मध्य गुजरात के परियेज जलाशय से शुरू होती है जो लंबा सफर तय करके आठ जिलों की सीमा पार करके सौराष्ट्र में आ पहुंची है। दो मीटर डायामीटर वाली इस पाइप लाइन के माध्यम से करीब चार हजार से भी ज्यादा गांवों और 10 शहरों को पानी की आपूर्ति अप्रैल 2001 के अंत तक बहाल कर दिये जाने की आशा है।

गुजरात की जीवन रेखा समान सरदार सरोवर नर्मदा परियोजना का कार्य उच्चतम न्यायालय के एक महत्वपूर्ण निर्णय के कारण 31 अक्तूबर 2000 से शुरू हो गया है। जब तक इस बांध की ऊंचाई 110 मीटर तक पहुंचे तब तक इस 30 हजार करोड़ रुपये की लागत वाली परियोजना की मुख्य नहर में प्राकृतिक ढंग से पानी का प्रवाह नहीं होगा।

सौराष्ट्र, कच्छ में पानी की गंभीर समस्या को मद्देनजर रखते हुए गुजरात सरकार ने एक ऐतिहासिक निर्णय लेकर नर्मदा बांध से पानी पंपों के माध्यम से लेकर मेईन शाखा में डालकर मही पाइप लाईन योजना के तहत पानी भावनगर, अमरेली तथा जूनागढ़ जिलों में पहुंचाए जाने की उम्मीद पैदा की है।

जामनगर, सुरेन्द्रनगर तथा कच्छ जिलों के गांवों के लिए एक और पाइप लाइन डालने का निर्णय लिया गया है जिससे. 1,300 करोड़ रुपये की लागत से इन तीनों जिलों में पानी पहुंचाया जायेगा। सौराष्ट्र और कच्छ में मार्च माह के मध्य में जब जल संकट इतना गहरा गया है कि इस क्षेत्र के अखबारों में प्रायः प्रतिदिन पानी के लिए लड़ाई–झगड़ों और हाथापाई के समाचार पढ़ने को मिलते हैं। ❑

संतोष

अर्जुनसिंह 'अंतिम'

किसान के लिए
लहलहाती फसल
बनियों के लिए
अच्छी सूद
कर्मचारियों के लिए
तनख्वाह एवं बोनस
मां के लिए
मुस्काता शिशु
मगर,
मजदूर के लिए
सिर्फ और सिर्फ
एक रोज का गुजारा
संतोष है जीवन का।

आजकल

साहित्य और संस्कृति का मासिक

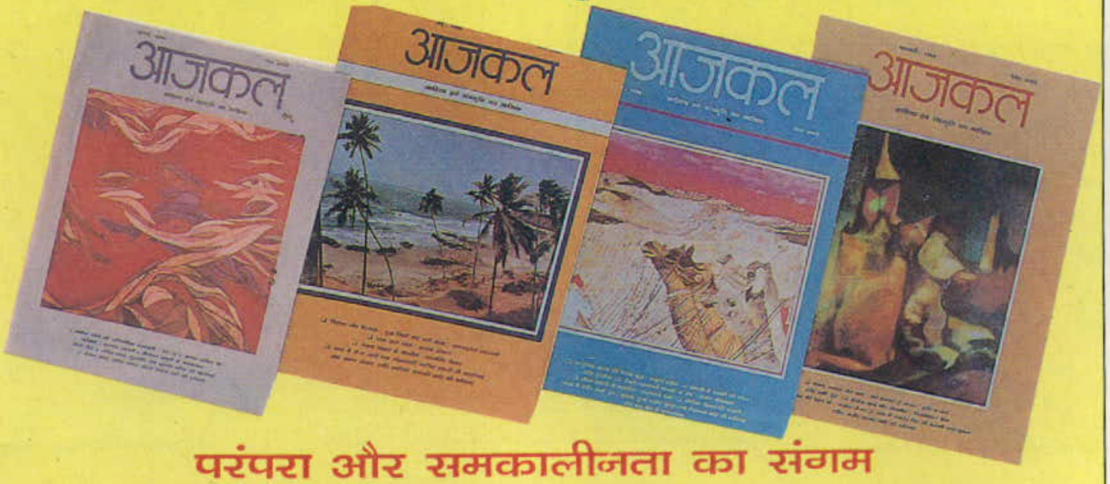

परंपरा और समकालीनता का संगम

हर महीने पढ़िए :

- साहित्य के मर्म की पहचान कराने वाले सारगर्भित लेख
- विद्वान लेखकों की विश्लेषणात्मक टिप्पणियां
- जीवन की गहराइयों को उद्‌घाटित करती कहानियां
- जिंदगी की मीठी-कड़वी अनुभूतियों को छूती कविताएं

अपने समाचारपत्र विक्रेता से लें या फिर नियमित ग्राहक बनें

चंदे की दरें : ☐ एक वर्ष : 70 रु. ☐ दो वर्ष : 135 रु. ☐ तीन वर्ष : 190 रु.

मनीआर्डर/डिमांड ड्राफ्ट/पोस्टल आर्डर निदेशक, प्रकाशन विभाग के नाम बनवाएं और निम्न पते पर भेजें :

विज्ञापन एवं प्रसार व्यवस्थापक,
प्रकाशन विभाग
पत्रिका एकांश, पूर्वी ब्लाक-4 , लेवल-7,
रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली-110066, दूरभाष : 6105590

इन स्थानों पर भी उपलब्ध है

विक्रय केन्द्र : प्रकाशन विभाग ☐ पटियाला हाउस, तिलक मार्ग, नई दिल्ली-110001 ☐ सुपर बाजार (दूसरी मंजिल), कनाट सर्कस, नई दिल्ली-110001 ☐ हाल नं. 196, पुराना सचिवालय, दिल्ली-110054 ☐ कामर्स हाउस, करीमभाई रोड, बालार्ड पायर, मुंबई-400038 ☐ 8, एस्प्लेनेड ईस्ट, कलकत्ता-700069 ☐ राजाजी भवन, बेसेंट नगर, चेन्नई-600009 ☐ बिहार राज्य सहकारी बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, पटना-800004 ☐ प्रेस रोड, तिरुअनंतपुरम-695001 ☐ 27/6, राममोहन राय मार्ग, लखनऊ-226019 ☐ राज्य पुरातत्वीय संग्रहालय बिल्डिंग, पब्लिक गार्डन्स, हैदराबाद-500001 ☐ प्रथम तल, 'एफ' विंग, केंद्रीय सदन, कोरामंगला, बंगलौर-560034.

विक्रय केंद्र : पत्र सूचना कार्यालय ☐ सी.जी.ओ. काम्पलैक्स, 'ए' विंग, ए.बी. रोड, इंदौर (म.प्र.) ☐ 80, मालवीय नगर, भोपाल-462003 ☐ बी-7, भवानी सिंह मार्ग, जयपुर (राजस्थान)

तालाब बांधता धरम सुभाव

जो समाज को जीवन दे, उसे निर्जीव कैसे माना जा सकता है? तालाबों में, जलस्रोत में जीवन माना गया और समाज ने उनके चारों ओर अपने जीवन को रचा। जिसके साथ जितना निकट का संबंध, जितना स्नेह, मन उसके उतने ही नाम रख लेता है। देश के अलग-अलग राज्यों में, भाषाओं में, बोलियों में तालाब के कई नाम हैं बोलियों के कोष में, उनके व्याकरण के ग्रंथों में, पर्यायवाची शब्दों की सूची में तालाब के नामों का एक भरा-पूरा परिवार देखने को मिलता है। डिंगल भाषा के व्याकरण का एक ग्रंथ हमीर नाम-माला तालाबों के पर्यायवाची नाम तो गिनाता ही है, साथ ही उनके स्वभाव का भी वर्णन करते हुए तालाबों को 'धरम सुभाव' कहता है।

लोक धरम सुभाव से जुड़ जाता है। प्रसंग सुख का हो तो तालाब बन जाएगा। प्रसंग दुख का भी हो तो तालाब बन जाएगा। जैसलमेर, बाड़मेर में परिवार में साधन कम हों, पूरा तालाब बनाने की गुंजाइश न हो तो उन सीमित साधनों का उपयोग पहले से बने किसी तालाब की पाल पर मिट्टी डालने, छोटी-मोटी मरम्मत करने में होता था। मृत्यु किस परिवार में नहीं आती? हर परिवार अपने दुखद प्रसंग को समाज के सुख के लिए तालाब से जोड़ देता था।

पूरे समाज पर दुख आता, अकाल पड़ता तब भी तालाब बनाने का काम होता। लोगों को तात्कालिक राहत मिलती और पानी का इंतज़ाम होने से बाद में फिर कभी आ सकने वाले इस दुख को सह सकने की शक्ति समाज में बनती थी। बिहार के मधुबनी इलाके में छठवीं सदी में आए एक बड़े अकाल के समय पूरे क्षेत्र के गांवों ने मिलकर 63 तालाब बनाए थे। इतनी बड़ी योजना बनाने से लेकर उसे पूरी करने तक के लिए कितना बड़ा संगठन बना होगा, कितने साधन जुटाए गए होंगे – नए लोग, नई सामाजिक और राजनैतिक संस्थाएं, इसे सोचकर तो देखें। मधुबनी में ये तालाब आज भी हैं और लोग इन्हें आज भी कृतज्ञता से याद रखे हैं।

कहीं पुरस्कार की तरह तालाब बना दिया जाता, तो कहीं तालाब बनाने का पुरस्कार मिलता। गोंड राजाओं की सीमा में भी तालाब बनाता, उसे उसके नीचे की ज़मीन का लगान नहीं देना पड़ता था। संबलपुर क्षेत्र में यह प्रथा विशेष रूप से मिलती थी।

दंड विधान में भी तालाब मिलता है। बुंदेलखंड में जातीय पंचायतें अपने किसी सदस्य की अक्षम्य गलती पर जब दंड देती थीं तो उसे दंड में प्रायः तालाब बनाने को कहती थीं। यह परंपरा आज भी राजस्थान में मिलती है। अलवर जिले के एक छोटे से गांव गोपालपुरा में पंचायती फैसलों को न मानने की गलती करने वालों से दंड स्वरूप कुछ पैसा ग्राम कोष में जमा करवाया जाता है। उस कोष में यहां पिछले दिनों दो छोटे–छोटे तालाब बनाए गए हैं।

गड़ा हुआ कोष किसी के हाथ लग जाए तो उसे अपने पर नहीं, परोपकार में लगाने की परंपरा रही है। परोपकार का अर्थ प्रायः तालाब बनाना या उनकी मरम्मत करना माना जाता था। कहा जाता है कि बुंदेलखंड के महाराजा छत्रसाल के बेटे जगतराज को गड़े हुए खज़ाने के बारे में एक बीजक मिला था। बीजक की सूचना के अनुसार जगतराज ने खज़ाना खोद निकाला। छत्रसाल को पता चला तो बहुत नाराज हुए : मृतक द्रव्य चंदेल को, क्यों तुम लियो उखार। अब जब खज़ाना उखाड़ ही लिया है तो उसका सबसे अच्छा उपयोग किया जाएगा। पिता ने बेटे को आज्ञा दी कि उससे चंदेलों के बने सभी तालाबों की मरम्मत की जाए और नए तालाब बनवाए जाएं। खज़ाना बहुत बड़ा था। पुराने तालाबों की मरम्मत हो गई और नए भी बनने शुरू हुए। वंशवृक्ष देखकर विक्रम संवत् 286 से 1162 तक की 22 पीढ़ियों के नाम पर पूरे 22 बड़े–बड़े तालाब बने थे। ये बुंदेलखंड में आज भी हैं।

गड़ा हुआ धन सबको नहीं मिलता। लेकिन सबको तालाब से जोड़कर देखने के लिए भी समाज में कुछ मान्यताएं रही हैं। अमावस और पूनों, इन दो दिनों को कारज यानी अच्छे और वह भी सार्वजनिक कामों का दिन माना गया है। इन दोनों दिनों में निजी काम से हटने और सार्वजनिक काम से जुड़ने का विधान रहा है। किसान अमावस और पूनों को अपने खेत में काम नहीं करते थे। उस समय का उपयोग वे अपने क्षेत्र के तालाब आदि की देखरेख व मरम्मत में लगाते थे। समाज में श्रम भी पूंजी है और उस पूंजी को निजी हित के साथ सार्वजनिक हित में भी लगाते जाते थे।

श्रम के साथ–साथ पूंजी का अलग से प्रबंध किया जाता रहा है। इस पूंजी की ज़रूरत प्रायः ठंड के बाद, तालाब में पानी उतर जाने पर पड़ती है।

तब गरमी का मौसम सामने खड़ा है और यही सबसे अच्छा समय है तालाब में कोई बड़ी टूट–फूट पर ध्यान देने का। वर्ष की बारह पूर्णिमाओं में से ग्यारह पूर्णिमाओं को श्रमदान के लिए रखा जाता रहा है पर पूस माह की पूनों पर तालाब के लिए धान या

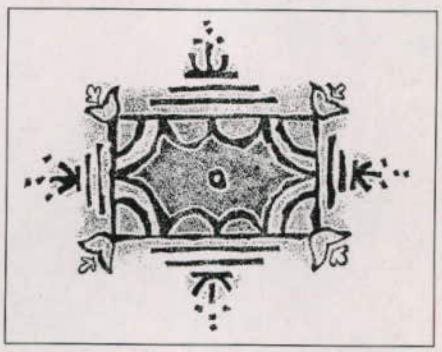

पैसा एकत्र किये जाने की परंपरा रही है। छत्तीसगढ़ में उस दिन छेर–छेरा त्योहार मनाया जाता है। छेर–छेरा में लोगों के दल निकलते हैं, घर–घर जाकर गीत गाते हैं और गृहस्थ से धान एकत्र करते हैं। धान की फसल कट कर घर आ चुकी होती है। हरेक घर अपने–अपने सामर्थ्य से धान का दान करता है। इस तरह जमा किया गया धान ग्रामकोष में रखा जाता है इसी कोष से आने वाले दिनों में तालाब और अन्य सार्वजनिक स्थानों की मरम्मत और नए काम पूरे किए जाते हैं।

सार्वजनिक तालाबों में तो सबका श्रम और पूंजी लगती ही थी, निहायत निजी किस्म के तालाबों में भी सार्वजनिक स्पर्श आवश्यक माना जाता रहा है। तालाब बनने के बाद उस इलाके के सभी सार्वजनिक स्थलों में थोड़ी–थोड़ी मिट्टी लाकर तालाब में डालने का चलन आज भी मिलता है। छत्तीसगढ़ में तालाब बनते ही उसमें घुड़साल, हाथीखाना, बाजार, मंदिर, श्मशान भूमि, वेश्यालय, अखाड़ों और विद्यालयों की मिट्टी डाली जाती थी।

शायद आज ज़्यादा पढ़–लिख जाने वाले अपने समाज से कट जाते हैं। लेकिन तब बड़े विद्या केंन्द्रों से निकलने का अवसर तालाब बनवाने के प्रसंग में बदल जाता था। मधुबनी, दरभंगा क्षेत्र में यह परंपरा बहुत बाद तक चलती रही है।

तालाबों में प्राण हैं। प्राण–प्रतिष्ठा का उत्सव बड़ी धूमधाम से होता था। उसी दिन उनका नाम रखा जाता था। कहीं–कहीं ताम्रपत्र या शिलालेख पर तालाब का पूरा विवरण उकेरा जाता था।

कहीं–कहीं तालाबों का पूरी विधि के साथ विवाह भी होता था। छत्तीसगढ़ में यह प्रथा आज भी जारी है विवाह से पहले तालाब का उपयोग नहीं हो सकता। न तो उससे पानी निकालेंगे और न उसे पार करेंगे। विवाह में क्षेत्र के सभी लोग, सारा गांव पाल पर उमड़ जाता है। आसपास के मंदिरों की मिट्टी लाई जाती है, गंगा जल आता है और इसी के साथ अन्य पांच या सात कुओं या तालाबों का जल मिलाकर विवाह पूरा होता है। कहीं–कहीं बनाने वाले अपने सामर्थ्य के हिसाब से दहेज तक का प्रबंध करते हैं।

विवाहोत्सव की स्मृति में भी तालाब पर स्तंभ लगाया जाता है। बहुत बाद में जब तालाब की सफाई – खुदाई दुबारा होती है तब भी उस घटना की याद में स्तंभ लगाने की परंपरा रही है।

आज बड़े शहरों की परिभाषा में आबादी का हिसाब केन्द्र में है। पहले बड़े शहर या गांव की परिभाषा में इसके तालाबों की गिनती होती थी। कितनी आबादी का शहर या गांव है, इसके बदले पूछा जाता था कितने तालाबों का गांव है। छत्तीसगढ़ी में बड़े गांव के लिए कहावत है कि वहां 'छै आगर छै कोरी, यानी 6 बीसी और 6 अधिक, 120 और 6, या 126 तालाब होने चाहिए। आज के बिलासपुर जिले के मल्हार क्षेत्र में, जो ईसा पूर्व बसाया गया था। पूरे 126 तालाब थे। उसी क्षेत्र में रतनपुर (दसवीं से बारहवीं शताब्दी), खरौदी

(सातवीं से बारहवीं शताब्दी), रायपुर के आरंग और कुवरा और सरगुजा ज़िले के दीपाडीह गांव में आज आठ सौ, हज़ार बरस बाद भी सौ, कहीं–कहीं तो पूरे 126 तालाब गिने जा सकते हैं।

इन तालाबों के दीर्घ जीवन का एक ही रहस्य था–ममत्व। यह मेरा है, हमारा है। ऐसी मान्यता के बाद रखरखाव जैसे शब्द छोटे लगने लगेंगे। भुजलिया के आठों अंग पानी में डूब सकें – इतना पानी ताल में रखना – ऐसा गीत गाने वाली, ऐसी कामना करने वाली स्त्रियां हैं तो उनके पीछे ऐसा समाज भी रहा है जो अपने कर्तव्य से इस कामना को पूरा करने का वातावरण बनाता था। घरगैल, घरमैल यानी सब घरों के मेल से तालाब का काम होता था।

सबका मेल तीर्थ है। जो तीर्थ न जा सकें, वे अपने यहां तालाब बना कर ही पुण्य ले सकते हैं। तालाब बनाने वाला पुण्यात्मा है, महात्मा है। जो तालाब बचाए, उसकी भी उतनी ही मान्यता मानी गई है। इस तरह तालाब एक तीर्थ है। यहां मेले लगते हैं। और इन मेलों में जुटने वाला समाज तालाब को अपनी आंखों में, मन में बसा लेता है।

तालाब समाज के मन में रहा है। और कहीं–कहीं तो उसके तन में भी। बहुत से वनवासी समाज गुदने में तालाब, बावड़ी भी गुदवाते हैं। गुदनों के चिन्हों में पशु–पक्षी, फूल आदि के साथ–साथ सहरिया समाज में सीता बावड़ी और साधारण बावड़ी के चिन्ह भी प्रचलित हैं। सहरिया शबरी को अपना पूर्वज मानते हैं। सीताजी से विशेष संबंध है। इसलिए सहरिया अपनी पिंडलियों पर सीता बावड़ी बहुत चाव से गुदवाते हैं।

सीता बावड़ी में एक मुख्य आयत है। भीतर लहरें हैं। बीचोबीच एक बिन्दु है जो जीवन का प्रतीक है। आयत के बाहर सीढ़ियां हैं और चारों कोनों पर फूल हैं और फूल में है जीवन की सुगंध – इतनी सब बातें एक सरल, सरस रेखाचित्र में उतार पाना बहुत कठिन है। लेकिन गुदना गोदने वाले कलाकार और गुदवाने वाले स्त्री–पुरुषों का मन तालाब, बावड़ी में इतना रमा रहा है कि आठ–दस रेखाएं, आठ–दस बिंदियां पूरे दृश्य को तन पर सहज ही उकेर देती हैं। यह प्रथा तमिलनाडु के दक्षिण आरकाट जिले के कुंराऊं समाज में भी है।

जिसके मन में, तन में तालाब रहा हो, वह तालाब को केवल पानी के एक गड्ढे की तरह नहीं देख सकेगा। उसके लिए तालाब एक जीवंत परंपरा है, परिवार है और उसके कई संबंध, संबंधी हैं। किस समय किसे याद करना है, ताकि तालाब बना रहे – इसकी भी उसे पूरी सुध है।

यदि समय पर पानी नहीं बरसे तो किस तक गुहार पहुंचानी है? इंद्र हैं वर्षा के देवता। पर सीधे उनको खटखटाना कठिन है, शायद ठीक भी नहीं। उनकी बेटी हैं काजल। काजल माता तक अपना संकट पहुंचाएं तो वे अपने पिता का ध्यान इस तरफ अच्छे से खींच सकेंगी। बोनी हो जाए और एक पखवाड़े तक पानी नहीं बरसे तो फिर काजल माता की पूजा होती है। पूरा गांव कांकड़वनी यानी गांव की सीमा पर लगे वन में बने तालाब तक पूजा गीत गाते हुए एकत्र होता है। फिर दक्षिण दिशा की ओर मुंह कर सारा गांव काजल माता से पानी की याचना करता है – दक्षिण से ही पानी आता है।

काजल माता को पूजने से पहले कई स्थानों में पवन–परीक्षा भी की जाती है। यह आषाढ़ शुक्ल पूर्णिमा पर होती है। इस दिन तालाबों पर मेला भरता है और वायु की गति देखकर पानी की भविष्यवाणी की जाती है। उस हिसाब से पानी समय पर गिर जाता है, न गिरे तो फिर काजल माता को बताना है।

तालाब का लबालब भर जाना भी एक बड़ा उत्सव बन जाता। समाज के लिए इससे बड़ा और कौन–सा प्रसंग होगा कि तालाब की अपरा चल निकलती है। भुज (कच्छ) के सबसे बड़े तालाब हमीरसर के घाट में बनी हाथी की एक मूर्ति अपरा चलने की सूचक है। जब जल इस मूर्ति को छू लेता तो पूरे शहर में खबर फैल जाती थी। शहर तालाब के घाटों पर आ जाता। कम पानी का इलाका इस घटना को एक त्योहार में बदल लेता। भुज के राजा घाट पर आते और पूरे शहर की उपस्थिति में तालाब की पूजा करते और पूरे भरे तालाब का आशीर्वाद लेकर लौटते। तालाब का पूरा भर जाना, सिर्फ एक घटना नहीं, आननंद है, मंगल सूचक है, उत्सव है, महोत्सव है। वह प्रजा और राजा को घाट तक ले आता था।

इन्हीं दिनों देवता भी घाट पर आते हैं। जल–झूलन त्योहार में मंदिरों की चल मूर्ति तालाब तक लाई जाती है और वहां पूरे श्रृंगार के साथ उन्हें झूला झुलाया जाता है। भगवान भी सावन के झूलों की पेंग का आनंद उठाते हैं।

कोई भी तालाब अकेला नहीं है। वह भरे पूरे जल परिवार का एक सदस्य है। उसमें सबका पानी है और उसका पानी सब में है ऐसी मान्यता रखने वालों ने एक तालाब सचमुच ऐसा ही बना दिया था। जगन्नाथपुरी के मंदिर के पास बिंदुसागर में देशभर के हर जल स्रोत का नदियों और समुद्रों तक का पानी मिला है। दूर–दूर से, अलग–अलग दिशाओं में पुरी आने वाले भक्त अपने साथ अपने क्षेत्र का थोड़ा–सा पानी ले आते हैं ओर उसे बिंदुसागर में अर्पित कर देते हैं।

देश की एकता की परीक्षा की इस घड़ी में बिंदुसागर 'राष्ट्रीय एकता का सागर' कहला सकता हैं बिंदुसागर जुड़े भारत का प्रतीक है।

आने वाला समय कैसा होगा? यह बताना हमेशा बड़ा कठिन रहा है। लेकिन इसका एक मापदंड तालाब भी था। नवरात्र के बाद जवारे विसर्जित होते हैं। राजस्थान में इस अवसर पर लोग तालाबों पर एकत्र होते और तब भोपा यानी पुजारीजी विसर्जन के बाद तालाब में पानी का स्तर देखकर आने वाले समय की भविष्यवाणी करते थे। बरसात तब तक बीत चुकी होती है जितना पानी तालाब में जमा होना था, वह हो चुका है। अब इस स्थिति पर निर्भर है आने वाले समय की परिस्थितियां।

आज यह प्रथा मिट–सी गई है। तालाब में जल–स्तर देख आने वाले समय की भविष्यवाणी करनी हो तो कई तालाबों पर खड़े भोपा शायद यही कहते कि बुरा समय आने वाला है। ❑

गांधी शांति प्रतिष्ठान द्वारा पुस्तक आज भी खरे हैं तालाब' से उद्धृत

महिला श्रमिकों को उत्पादन कार्य का प्रत्यक्ष लाभ क्यों नहीं मिलता

विभा प्रकाश श्रीवास्तव

हमारा देश एक ऐसा देश है जिसमें 'श्रम की गरिमा' लुप्त होती जा रही है, विशेषकर महिला श्रम की। दिन में 16–17 घंटे काम करके भी उनके हाथ कुछ नहीं आता, न धन न मान। देश में खेतिहर मजदूरों की संख्या में लगभग साढ़े तीन करोड़ श्रमिक महिलाएं हैं। इस तरह ग्रामीण अर्थव्यवस्था में महिलाएं महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। यदि महिलाओं के श्रम की भागीदारी न हो तो ग्रामीण अर्थव्यवस्था असंतुलित हो जाएगी और ग्रामीण परिवारों को दो जून की रोटी भी नसीब न होगी।

इतना सब होते हुए भी समाज में स्त्रियों के काम का मूल्यांकन नहीं होता और स्त्री–पुरुष से हीन समझी जाती है, जबकि स्त्रियों के श्रम का उपभोग पुरुषों से अपेक्षाकृत कहीं अधिक किया जाता है। खेतों में निराई, गुड़ाई, कटाई एवं रोपाई आदि स्त्रियां ही करती हैं, किंतु उन्हें किसान कोई नहीं कहता। किसान कहलाने का श्रेय सिर्फ पुरुषों को ही प्राप्त है। एक श्रमिक स्त्री दिन के पूरे काम का दो तिहाई काम प्रतिदिन करती है। वह मजदूरी करने जाती है। घर की व्यवस्था देखती है, भोजन तैयार करती है। दूर–दूर से पानी लाती है, ईंधन की व्यवस्था करती है, कपड़े धोती है और बच्चों का पालन–पोषण करती है। इतना सब होते हुए भी उसकी चिंता किसी को नहीं होती और उसे अनेक समस्याओं से आए दिन जूझना पड़ता है।

एक सर्वेक्षण के अनुसार देश में व्याप्त महंगाई का बोझ सबसे अधिक महिलाओं को ही झेलना पड़ता है। आज की आकाश छूती महंगाई ने जहां श्रमिक परिवारों को ऋणग्रस्त बना दिया है, वहीं महिला श्रमिकों को अपने गहने, बर्तन आदि गिरवी रखने के लिए मजबूर होना पड़ा है। काम पूरे साल नहीं मिलता,

कड़ी मेहनत के बावजूद महिलाओं को उनके श्रम का उचित महत्व नहीं मिलता

अतः महिला श्रमिकों को अपने गांव से पलायन कर अन्य जगहों पर जाना पड़ता है। यद्यपि सरकार ने समान काम के लिए समान मजदूरी देने का प्रावधान श्रमिक अधिनियम के अंतर्गत किया है, किन्तु व्यवहार में ऐसा नहीं है।

प्रायः सुनने में आता है कि स्त्रियों को पुरुषों से कम मजदूरी दी जाती है। अगरबत्ती बनाने वाली महिला श्रमिक एक किलो मसाले की अगरबत्ती बनाने पर बड़ी मुश्किल से सात से दस रुपए तक पाती है, जबकि उसका

एक श्रमिक स्त्री दिन के पूरे काम का दो तिहाई काम प्रतिदिन करती है। वह मजदूरी करने जाती है। घर की व्यवस्था देखती है, भोजन तैयार करती है। दूर–दूर से पानी लाती है, ईंधन की व्यवस्था करती है, कपड़े धोती है और बच्चों का पालन–पोषण करती है। इतना सब होते हुए भी उसकी चिंता किसी को नहीं होती और उसे अनेक समस्याओं से आए दिन जूझना पड़ता है।

इस काम में पूरा दिन खप जाता है। दस रुपये पाने वाली स्त्री किस तरह अपना परिवार चला पाएगी? यह विचारणीय प्रश्न है। बीड़ी श्रमिक महिलाओं की भी अपनी दास्तान है। हालांकि ये श्रमिक महिलाएं बीड़ी बनाने का काम पीढ़ी–दर–पीढ़ी करती चली आ रही हैं, फिर भी वे अपने मालिकों से बोनस आदि लाभ प्राप्त करने की अधिकारिणी नहीं बन पातीं क्योंकि तीन महीने के बाद रजिस्टर में नियोक्ता किसी अन्य महिला का नाम चढ़ा देते हैं भले ही निरंतर वही महिला श्रमिक बीड़ी बना रही हो।

उन्नीस सौ नब्बे के आते–आते विकासशील देशों के उद्योगों में एक चौथाई श्रमिक स्त्रियां हो गईं जबकि आज से बीस वर्ष पूर्व तक उनकी संख्या सिर्फ बीस प्रतिशत थी। पर स्त्रियों के हिसाब से कृषि के क्षेत्र में हुए आर्थिक परिवर्तन का असर काफी अस्पष्ट रहा है। अर्थशास्त्री इस विषय में कोई निश्चित निष्कर्ष नहीं निकाल पाए हैं कि कृषि या असंगठित क्षेत्रों में महिलाओं की स्थिति में कोई परिवर्तन आया भी है या नहीं।

ग्रामीण शहरी आव्रजन के बारे में किए गए सारे अध्ययन इस तथ्य को नजरअंदाज कर जाते हैं कि आव्रजन के पूर्व कृषि–आधारित उद्योगों में सारा काम स्त्रियों द्वारा किया जाता था, इसलिए जब घर के मर्द शहरों की तरफ चले जाते हैं तब भी किसान परिवारों में उत्पादन प्रभावित नहीं होता। इस प्रवृत्ति की छद्म बरोजगारी के रूप में व्याख्या की जाती है। इस स्थिति का बेहतर आंकलन इस रूप में होना चाहिए कि स्त्रियां तो घरों तथा खेतों में निरंतर उत्पादक कार्यों में लगी रहती हैं जबकि पुरुष सिर्फ फसल–कटाई के समय ही काम करते हैं।

औद्योगीकरण के शुरुआती दौर में सरकारी आंकड़े कृषि में स्त्रियों की रोजगार–स्थिति को जो गिरवी हुआ बतलाते हैं उसका मुख्य कारण यही है कि जैसे ही पुरुष खेती छोड़कर दूसरे धंधों में जाते हैं स्त्रियां उनका पूरा काम संभाल लेती हैं भले ही वे काम करने के लिए मौसमी मजदूरों के रूप में अन्य लोगों के खेतों पर नहीं जाती हों। अतः स्त्रियों का रोजगार कम न होकर अपना स्वरूप बदल लेता है। महिलाएं राष्ट्रीय आंकड़ों में तभी शरीक हो पाती हैं जब वे अपने से बाहर किसी औद्योगिक संयंत्र में काम करती हैं। अर्थशास्त्री चिनार का कहना है कि छोटे तथा दस्तकारी उद्योगों की बात अलग है। इस बात के प्रमाण अब बहुतायत से मिल रहे हैं कि कई सेक्टरों में उत्पादन का अधिकांश भाग महिलाओं द्वारा उनके घरों में ही उत्पादित किया जाता है। सड़कों पर फेरी वालों द्वारा बेचे जाने वाले अचार, मुरब्बे, मिठाइयां जैसी अनेक वस्तुएं घर पर महिलाओं द्वारा ही बनाई जाती हैं।

भारत में ही नहीं तुर्की में भी तौलिए तथा अन्य वस्त्रों के छोटे उत्पादक मिलों के खिलाफ टिके रहे तो उसका मुख्य कारण यही था कि वे अपने घरों में मौजूद महिला–बुनकरों पर निर्भर थे। यहां तक कि सुबह दौड़ लगाते समय पहने जाने वाले वस्त्रों जैसे अपरम्परागत उद्योगों में भी अधिकांश माल महिलाओं द्वारा सिलाई मशीनों पर बनाया जाता था। पर, चूंकि उन्हें बाजार भाव से कोई वेतन नहीं दिया जाता, कोई सहवर्ती लाभ, रिटायरमेंट, परिलब्धियां नहीं मिलती इसलिए राष्ट्रीय आय में उनके श्रम की गणना नहीं होती।

परिवार में महिलाओं के इस श्रम को अब परिसम्पत्ति माना जा रहा है। पश्चिम तुर्की में कुशल कालीन बुनने वाली महिलाओं के मामले में जो सात वर्ष की उम्र में ही काम में लगा

जैसे ही पुरुष खेती छोड़कर दूसरे धंधों में जाते हैं स्त्रियां उनका पूरा काम संभाल लेती हैं भले ही वे काम करने के लिए मौसमी मजदूरों के रूप में अन्य लोगों के खेतों पर नहीं जाती हों। अतः स्त्रियों का रोजगार कम न होकर अपना स्वरूप बदल लेता है। महिलाएं राष्ट्रीय आंकड़ों में तभी शरीक हो पाती हैं जब वे बाहर किसी औद्योगिक संयंत्र में काम करती हैं।

दी जाती हैं उनकी शादी को तब तक के लिए पीछे कर दिया जाता है जब तक कि वे तीस साल की उम्र पार नहीं कर जातीं। इसका साफ उद्देश्य यही होता है कि लड़कियों के घर में रहते हुए ही उनसे अधिकतम उत्पादकता का लाभ लिया जा सके। इस अवधि में उनके द्वारा अर्जित धन को उनके विवाह के समय दहेज के रूप में दे दिया जाता है। कमोवेश यही स्थिति आज लगभग हर भारतीय परिवार की है। दूसरे शब्दों में इस तरह के छद्म रोजगार की स्थिति के कारण महिलाओं को ऐसी संपत्ति माना जाता है जिसका मूल्य पुरुष–प्रधान समाज तय करता है।

इसलिए सरकार का वास्तविक लक्ष्य दहेज प्रथा को समाप्त करना ही न होकर ऐसी स्थिति बनाना भी होना चाहिए जिसमें परिवार की महिला श्रमिकों को उनके उत्पादन–कार्य का प्रत्यक्ष लाभ मिल सके। ❑

स्वदेशी तकनीकों का विकास और उनके विकल्पों की भूमिका

आलोक पाण्डेय*

जैसा कि विदित है कि प्रत्येक समाज की सामाजिक–आर्थिक प्रगति के पीछे उसकी तकनीकी प्रगति की प्रमुख भूमिका होती है। यह इसलिए होता है क्योंकि स्वभावतः मनुष्य अपनी आवश्यकताओं और सुविधाओं के अनुरूप ऐसी तकनीकों को खोजने या बनाने का निरन्तर प्रयास करता रहता है जिससे उसका जीवन सुखद और आरामदायक हो सके। मानव की इस प्रक्रिया से तकनीकी प्रगति तो होती ही है, सामाजिक प्रगति भी इससे स्वतः हो जाती है। सामान्तया तकनीकों के विकास द्वारा जहां एक ओर प्रायः धन, समय, स्थान, इत्यादि के व्यय को न्यूनतम (इकोनोमाइज) करने का प्रयास किया जाता है वहीं दूसरी ओर उनके द्वारा निर्मित वस्तुओं की गुणवत्ता, उनके उत्पादन और बिक्री, तथा उनसे होने वाले लाभ को अधिकतम करने का प्रयास किया जाता है।

विकल्प वाली तकनीकें स्वीकार्य

यदि तकनीकों के विकास तथा समाज में उनकी स्वीकार्यता की बात करें तो यह स्पष्ट होता है कि प्रत्येक समाज में तत्कालीन समय में विदित सभी तकनीकों को जन सामान्य द्वारा न स्वीकार कर केवल कुछ उपयोगी तकनीकों को ही स्वीकार कर प्रचलन में लाया जाता है। उनमें भी प्रायः ऐसी तकनीकें ज्यादा स्वीकार्य होती हैं जिनके विकल्प भी साथ ही साथ उपलब्ध होते हैं। उदाहरण के रूप में यदि हम कृषि के विकास में उन्नत किस्म के बीजों के प्रचलन को देखें तो हम पाते हैं कि इसकी सफलता का एक प्रमुख कारण यह है कि इन बीजों के बहुत से विकल्प (किस्में) बाजार में उपलब्ध थे तथा देश के विभिन्न भागों, जहां–जहां इन्हें सफलता मिली, वहां के लोगों ने उन विकल्पों में से अपनी आवश्यकतानुसार किस्म का चयन किया। जिन बीजों में विकल्पों की सुविधा उपलब्ध नहीं थी या कम थी (विशेष रूप से तिलहनी फसलों में) उनका विकास या प्रसार नहीं हो पाया।

यहां यह बात भी स्वीकार्य है कि विकसित की गई तकनीकों के प्रसार में उन तकनीकों से सम्बन्धित 'विक्रय–पश्चात सेवा' की उपलब्धता की भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। यह पाया जाता है कि अपने विकल्प रखने वाली तकनीकों की 'विक्रय–पश्चात सेवा' आसानी से प्रायः प्रत्येक स्थान पर उपलब्ध हो जाती है क्योंकि इन तकनीकों से जुड़े कारीगर भी अपनी वृत्तिका को सुनिश्चित और सुदृढ़ करने हेतु बहुविकल्पों वाली तकनीकों में ही कुशलता प्राप्त करना पसन्द करते हैं।

दूसरे उदाहरण के रूप में आटोमोबाइल उद्योग का उदाहरण लिया जा सकता है और इसमें भी इस उद्योग के प्रचार व प्रसार में शायद ही किसी को कोई आपत्ति हो। किन्तु

* शोध छात्र, गोबिन्द बल्लभ पन्त सामाजिक विज्ञान संस्थान, इलाहाबाद।

इसी के साथ यदि हम इस उद्योग के विकास की प्रक्रिया को देखें तो यह स्पष्ट होता है कि इस उद्योग में प्रयुक्त तकनीकों ने न केवल वाहन उद्योग में क्रान्ति लाई वरन जनसामान्य को इतने विकल्प दिए कि विभिन्न व्यक्तियों ने अपनी परिस्थिति, आवश्यकता व सुविधा के अनुसार वाहनों का चयन किया। यही कारण है कि आज भी यह उद्योग निरन्तर प्रगति के पथ पर अग्रसर है।

सूचना तकनीक

वर्तमान संदर्भ में यदि हम उदाहरण लेना चाहें तो हम पाते हैं कि आधुनिक युग में सूचना तकनीक का निरन्तर प्रचार–प्रसार हो रहा है और ऐसा केवल इसलिए हो रहा है क्योंकि इस उद्योग में भी विकल्पों की बहुत संभावना है और यही कारण है इसकी भी स्वीकार्यता लगातार बढ़ रही है। कम्प्यूटर द्वारा 'वर्ड प्रोसेसिंग' का एक सामान्य उदाहरण लें तो स्पष्ट होता है कि अंग्रेजी भाषा के 'साफ्टवेयर' के कारण संभवतः उसकी उपादेयता सीमित हो सकती थी किन्तु आज अंग्रेजी के विकल्प के रूप में हिन्दी, संस्कृत, तेलुगु, कन्नड़, तमिल, तथा ऐसी ही अन्य भारतीय व विदेशी भाषाओं के 'साफ्टवेयर' उपलब्ध होने के कारण उसकी उपादेयता निरन्तर बढ़ती जा रही है। इस क्षेत्र में कार्य कर रहे विशेषज्ञ इस बात का लगातार ध्यान रख रहे हैं कि किस प्रकार से जनसामान्य को सस्ते दामों पर अधिक से अधिक व अच्छी से अच्छी सुविधा उपलब्ध कराई जा सके। दूर–संचार के क्षेत्रों में इसके परिणाम तो आने शुरू हो गए हैं।

अंधे अनुकरण के कारण असफल

अब यदि हम भारतीय समाज को सन्दर्भ मान कर तकनीकी विकास पर चिन्तन करें तो हम पाते हैं कि सर्वप्रथम तो हमने देश में तकनीकी विकास के नाम पर अपने यहां उपलब्ध या प्रचलित प्राचीन तकनीकों की सामाजिक व सांस्कृतिक उपादेयता को ठीक ढंग से समझने का प्रयास नहीं किया। देश के योजनाकारों ने देश में ही उपलब्ध तकनीकों को बिना जाने–समझे अन्य देशों में विकसित की गई तकनीकों का अन्धानुकरण करने का प्रयास किया। ऐसा करने के दौरान लोगों की सांस्कृतिक व सामाजिक भावना का ध्यान नहीं रखा गया। अतः तकनीकों के विकास को जन–समर्थन नहीं मिला। यही कारण है कि अधिकांश तकनीकें सर्व–सम्मत रूप में स्वीकार नहीं की गईं और आंशिक रूप से ही सफल साबित हुईं।

इसके साथ ही यहां यह भी कहना समीचीन होगा कि देश के योजनाकारों और प्रशासकों ने समुचित विकास हेतु आवश्यक व स्वीकार्य तकनीकों के देश में विकसित करने की आवश्यकता पर जोर नहीं दिया। देश में तकनीकों के शोधपरक विकास कार्यक्रमों पर भी उचित निवेश नहीं किया गया और हम मात्र दूसरे देशों में खोजी गई तकनीकों को आंशिक परिवर्तन के बाद (कुछ मामलों में तो बिल्कुल नहीं) स्वीकार करने का प्रयास करते रहे। विगत वर्षों में कुछ ऐसी भी तकनीकें आईं जो तत्कालीन परिस्थितियों में अन्य विकल्पों के अभाव में मात्र सीमित अवधि के लिये स्वीकार की गई लेकिन जैसे ही लोगों को अपनी आवश्यकता और सुविधानुसार उससे अच्छा विकल्प मिला, तत्काल ही उन नये विकल्पों को स्वीकार कर लिया गया। कुछ मामलों में तकनीकों का प्रसार इसलिये नहीं हो पाया क्योंकि उनके विकल्प इस प्रकार के थे जिन्हें सामाजिक या धार्मिक रूढ़ियों के कारण लोगों की मान्यता नहीं मिल पाई।

आर्थिक पक्ष अधिक महत्वपूर्ण

यहां एक और प्रश्न की चर्चा भी की जा सकती है जो लोगों के मन में उठती रहती है। प्रायः यह देखने में आता है कि तकनीकों के विकास में आर्थिक पक्ष की ही प्रधानता होती है जबकि उनमें सामाजिक, आध्यात्मिक, व पारिस्थितिकीय पक्षों पर विशेष महत्व नहीं दिया जाता है। यदि इन प्रश्नों का हल प्राचीन धार्मिक व आध्यात्मिक ग्रन्थों में ही ढूंढते हुए इस सन्दर्भ में उपलब्ध प्राचीन ग्रन्थों पर विचार किया जाए तो यह स्पष्ट होता है कि मात्र गृहस्थ आश्रम ही ऐसा आश्रम है जो एक सामान्य मनुष्य सम्पूर्ण मनोयोग से जीता है। पुनः चूंकि इस आश्रम की अवधि में मनुष्य का प्रमुख लक्ष्य धनोपार्जन होता है अतः स्पष्ट है कि उसके या वृहद अर्थों में समाज के लिए आर्थिक गतिविधियां ही सर्वाधिक महत्वपूर्ण होती हैं।

उपरोक्त विश्लेषणों के आधार पर यदि निष्कर्ष निकाला जाए तो कुछ महत्वपूर्ण बातें सामने आती हैं जिसे निम्नवत रखा जा सकता है :

- सर्वप्रथम तो देश में तकनीकों के विकास के लिए एक ऐसे वातावरण का निर्माण किया जाए जिसमें सभी को यह समझाया जा सके कि देश की खुशहाली के लिये शोधपरक विकास कार्यों पर समुचित निवेश करना ही होगा। इन्ही आधारों पर भविष्य में समाज की आवश्यकता को ध्यान में रखकर वैज्ञानिकों द्वारा तकनीकों का विकास देश में ही किया जाना संभव हो पायेगा।
- देश की विभिन्नतापूर्ण तथा बहुआयामी सामाजिक, आर्थिक व भौगोलिक परिस्थितियों को ध्यान में रखकर वैज्ञानिकों द्वारा तकनीकों के विकास के साथ ही साथ उनके विकल्पों के विकास पर भी उतने ही महत्वपूर्ण तरीके से ध्यान दिया जाना चाहिये। ऐसा होने पर अपनी परिस्थितियों के अनुकूल विभिन्न समाज के लोग इन तकनीकों को स्वीकार करने में समर्थ होंगे जिससे तकनीकों के विकास के साथ ही साथ उनका प्रसार भी होता रहेगा।
- तकनीकों के विकास के साथ ही साथ उनकी कार्य प्रणाली से संबंधित जानकारियों का भी जनसामान्य में प्रसार किया जाना चाहिये। इसके लिए यह भी अनिवार्य हो जाता है कि शिक्षा के विकास पर भी समुचित ध्यान दिया जाए तथा प्रारम्भिक वर्षों से ही पाठ्यक्रमों में ऐसे अध्यायों को सम्मिलित किए जाने का प्रयास किया जाना चाहिए जिनसे बालकों के मन में तकनीकों को सीखने या तकनीकी ज्ञान प्राप्त करने की भावना सुरुचिपूर्ण ढंग से जागृत की जा सके।
- जिन तकनीकों से पर्यावरण या वृहद रूप में नैसर्गिक जीवन को क्षति पहुंच रही हो उन तकनीकों को रोकने तथा उनके स्थान पर नई व उपयुक्त तकनीकों को खोजने का भी प्रयास निश्चित रूप से किया जाना चाहिए। इन प्रयासों से लोगों के स्वास्थ्य का भी समुचित विकास हो सकेगा तथा 'सर्वे सन्तु निरामयाः' के लक्ष्य को भी प्राप्त करने में मदद मिल सकेगी। ❑

सहकारिता में स्वायत्तता

प्रो. उमरावमल शाह

भारत में सहकारिता का प्रादुर्भाव एवं विकास एक विशेष नीति के अन्तर्गत न होकर एक कार्यक्रम के रूप में हुआ है। अपेक्षा यही रही कि सहकारिता का संस्थागत प्रयास उसके सदस्यों के आर्थिक एवं सामाजिक विकास में भागीदार बने। चूंकि सहकारिता शासकीय पहल पर हुई और स्वतंत्रता उपरांत योजनाओं में इसे महत्वपूर्ण स्थान दिया गया, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्र के विकास में, सरकार की भूमिका स्वतंत्रता उपरांत सतत महत्वपूर्ण होती गई। परिणामतः शासन द्वारा सहकारिता के विकास की योजना बनाना, उसे क्रियान्वित करना, सहकारी समितियों पर पूर्ण अंकुश एवं नियन्त्रण रखना और विभागीय अधिकारियों को सभी स्तर की सहकारी समितियों पर मुख्य कार्यकारी/प्रशासक नियुक्त करना आदि सहकारिता के प्रति राज्य की मुख्य भूमिका बन गई। लिहाजा जनतंत्र पर आधारित, लोकतांत्रिक प्रणाली एवं स्वायत्तता तथा सदस्यों की पूर्ण भागीदारी मात्र "सहकारिता" के मूल विचार से निकल गई और सहकारी संस्थाएं आम जनता की दृष्टि में सहकारी न रहकर सरकारी संस्थाएं बन गईं। बस यहीं से सहकारिता में स्वायत्तता लिप्त होती चली गई।

अंतर्राष्ट्रीय सहकारी परिसंघ द्वारा सन 1995 में मेनचेस्टर इंग्लैण्ड में आयोजित अंतर्राष्ट्रीय सहकारी कांग्रेस ने पुनः एक बार सहकारी समिति को परिभाषित करते हुए सहकारिता की संस्थागत स्वायत्तता की ओर ध्यान आकृष्ट कर स्पष्टतया इंगित किया कि सहकारी समिति व्यक्तियों की एक ऐसी संस्था है जो संयुक्त स्वामित्व वाले और लोकतंत्रीय आधार पर नियंत्रित उद्यम के जरिये अपनी सामान्य आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए स्वेच्छा से एकजुट होते हैं। इस प्रकार सहकारी समिति पूर्णरूपेण एक स्वायत्त संस्था है। स्वायत्तता विहीन सहकारी समिति किसी भी परिस्थिति में वैचारिक दृष्टिकोण से सहकारी समिति कहलाने का अधिकार नहीं रखती है। सरकार सहकारी समिति के लिए "बाह्यतत्व" है।

सहकारी समितियों में "स्वायत्तता और स्वतंत्रता" को सहकारिता के एक सिद्धांत के रूप में परिभाषित करते हुए स्पष्ट किया गया है कि सहकारी समितियां अपने सदस्यों द्वारा नियंत्रित एवं स्वावलंबी संस्थाएं होती हैं। यदि वे सरकार सहित अन्य संगठनों के साथ कोई करार करती हैं या किसी भी प्रकार से सहभागिता रखती हैं अथवा बाहरी स्रोतों से पूंजी जुटाती हैं तो वे ऐसा उन शर्तों पर करती हैं जिनमें उनके सदस्यों द्वारा प्रजातांत्रिक नियंत्रण सुनिश्चित होता हो और स्वायत्तता भी बनी रहती हो।

सहकारी संस्थाओं में यदि सदस्य अपने दायित्व और अधिकारों के निर्वहन से वंचित रहते हैं तो उसकी स्वायत्तता भंग होती है। सहकारी समिति सदस्य आधारित है। इनका गठन सदस्यों की आवश्यकताओं एवं आकांक्षाओं को पूरा करने के उद्देश्य से किया जाता है। सदस्य ही इसका स्वामित्व रखते हैं। इन समितियों के प्रजातांत्रिक स्वरूप को बनाये रखने के लिए पदाधिकारियों का चुनाव भी समय पर प्रजातांत्रिक प्रणाली के आधार पर हो, ऐसी परिकल्पना रही है।

भारत के सहकारी आन्दोलन में "सहकारी समितियों को अधिक से अधिक स्वायत्तता" सदैव चर्चा का विषय रहा है क्योंकि सहकारी कानून के प्रावधानों ने इस मूल विचार को ही कुंठित कर दिया है। राज्य सरकारों द्वारा इसी कानून के माध्यम से समय–समय पर सहकारी समितियों में हस्तक्षेप किया जाता रहा है जिनमें प्रमुख हैं निर्वाचित सहकारी संचालक मंण्डलों को भंग करना एवं शासकीय कर्मचारी को प्रशासक नियुक्त करना, सहकारी समितियों के उपनियमों में जो कि समिति की आन्तरिक कार्यप्रणाली को संचालित करते हैं उनमें सरकार द्वारा स्वयं संशोधन लादना, समितियों द्वारा व्यावसायिक निर्णयों को क्रियान्वयन से रोकने का अधिकार, विशेष अंकेक्षण के प्रावधान का उपयोग कर सहकारी नेतृत्व का मनोबल गिराकर सदस्यों में भ्रम पैदा करना आदि प्रमुख हैं। इन्हीं सहकारी कानूनों के प्रावधानों के कारण प्रादेशिक सरकारें सत्ता संभालते ही प्रदेश की सहकारी संस्थाओं को भंग कर देती हैं। सहकारिता में स्वायत्तता का विचार तो यहां तक प्रतिपादित करता है कि यदि किसी संस्था को किन्हीं परिस्थितियों में भी भंग करना पड़े तो उनमें सैद्धान्तिक दृष्टि से संघीय संस्था को कार्यभार सौंपा जाना चाहिए तथा एक निश्चित अवधि उपरान्त चुने हुए प्रतिनिधियों को पुनः कार्यभार सौंप देना चाहिए। कुछ राज्यों ने तो सहकारिता में स्वायत्तता को तिलांजलि देकर अपनी राजनैतिक आकांक्षाओं को भी सहकारिता पर हावी किया है। उदाहरणार्थ उत्तर प्रदेश राज्य में तो कानून के जरिये निर्वाचित पदाधिकारियों के पांच साल के कार्यकाल को तीन साल कर दिया गया ताकि विपक्ष के लोगों को सहकारिता के प्रबन्धन से हटाया जा सके। इस प्रकार का आचरण "सहकारिता में स्वायत्तता" पर सरकार की इच्छा शक्ति के अभाव एवं उसके राजनीतिकरण को ही दर्शाता है।

सहकारी समितियों में स्वायत्तता का अभाव :

सहकारी समितियां राज्य के सहकारी कानून

* पूर्व प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष सहकारिता, सहकारी कानून एवं प्रशासन, वै.मे. राष्ट्रीय सहकारी प्रबन्ध संस्थान, पुणे

सहकारी संस्थाओं को मजबूत बनाने के लिए उन्हें स्वायत्तता देना जरूरी है

के अन्तर्गत गठित होकर कार्य करती हैं। हमारे देश के प्रायः सभी राज्यों में सहकारी कानून सहकारी संस्थाओं को कार्य करने की पूर्ण स्वायत्तता नहीं प्रदान करते हैं। निर्वाचित प्रतिनिधियों को स्वतंत्र रूप से कार्य करने में बाधक बनकर दिन–प्रतिदिन के कार्यों पर भी सरकारी तंत्र का नियंत्रण रहता है। सहकारी कानून के प्रावधानों का लाभ उठाकर शासन करने वाली राजनीतिक पार्टी नियमों का दुरुपयोग करती हैं। जब तक अप्रजातांत्रिक प्रावधानों को सहकारी कानून से नहीं हटाया जाएगा तब तक सहकारी संस्थाएं विकसित नहीं होंगी और सदस्यों का अपने प्रयासों द्वारा संस्था के माध्यम से विकास करने का विश्वास हट जाएगा।

स्वायत्तता में बाधक – सहकारी कानून

सहकारिता में स्वायत्तता के पनपने का मूल कारण राज्यों के सहकारी विधानों के प्रतिबन्धात्मक प्रावधान ही हैं जिनमें पंजीयक, सहकारी समितियों को पूर्ण नियंत्रण रखने के अधिकार दिए गए हैं। शासकीय अधिकारियों को ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश बनाकर शासन ने सहकारिताओं को अपने निर्देश में चलने वाली संस्थाओं का स्वरूप दे दिया और सदस्य की भूमिका को केवल लाभार्थी तक सीमित कर दिया। अतः सहकारिता दर्शन के चिन्तकों ने स्वतंत्रता के उपरान्त "सहकारी कानून" को लेकर इसमें आमूल परिवर्तन के विचार को विभिन्न कमेटियों/विशेषज्ञ समूहों के माध्यम से प्रस्तुत किया है। इसी आशय के प्रथम प्रयास के अन्तर्गत सन 1956 में केन्द्रीय सरकार द्वारा एस.टी. राजा कमेटी गठित की गई। इस समिति ने सन 1957 में अपना प्रतिवेदन भारत सरकार को प्रस्तुत किया जिसके अंतर्गत एक आदर्श सहकारी विधेयक की आवश्यकता भारत सरकार को सुझाई गई। भारत सरकार ने सभी राज्यों को अपने सहकारी अधिनियम में संशोधन करने का सुझाव दिया जो राजा कमेटी द्वारा दिए गए थे। लेकिन केन्द्र सरकार का यह प्रयास असफल–सा ही रहा।

सहकारिता पर गठित मिर्धा कमेटी (1965) ने भी अपनी संतुत्तियों द्वारा सहकारिता के मूल सिद्धान्तों की ओर ध्यान आकृष्ट किया और सहकारिता के जनतांत्रिक स्वरूप एवं स्वायत्तता पर सहकारी कानून में संशोधन के प्रस्ताव रखे। इस रिपोर्ट के प्राप्त होने के बाद देश के सभी राज्यों में सहकारी कानून को लेकर चर्चाएं हुईं, पर बदलाव लाने में विशेष प्रगति नहीं हो पाई।

सन् 1987 में गठित के.एन अर्द्धनारीश्वरन कमेटी ने भी अपनी रिपोर्ट में स्पष्टतया इंगित किया कि सहकारी विधानों में से उन प्रावधानों को हटाया जाना चाहिए जो कि सहकारिता के जनतांत्रिक स्वरूप एवं स्वायत्तता के विकास में बाधक हैं तथा पंजीयक के अधिकारों में भी कटौती हो जिससे कि उसकी सकारात्मक भूमिका विकसित हो न कि उसके द्वारा नकारात्मक प्रावधानों का उपयोग हो। सहकारी

समितियों की व्यावसायिक क्षमता और स्वायत्तता विकसित हो, इसके लिए संघीय सहकारी संस्थाओं को अधिक अधिकार सम्पन्न बनाने पर बल दिया गया।

सभी विशेषज्ञ समितियों की संतुतियों के बावजूद भी सरकार की इच्छाशक्ति के अभाव में सहकारी विधानों में वांछित बदलाव नहीं आ पाए।

चौधरी ब्रह्मप्रकाश कमेटी

सब परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए योजना आयोग ने चौधरी ब्रह्मप्रकाश की अध्यक्षता में मार्च 1990 में एक समिति का गठन किया जिसका मुख्य बिन्दु "एक आदर्श राज्य सहकारी बिल" प्रस्तुत करना था। इस समिति ने मई 1991 में अपना प्रतिवेदन योजना आयोग को प्रस्तुत कर दिया। इसके आधार पर एक आदर्श सहकारी अधिनियम बनाकर समस्त राज्यों को प्रेषित किया गया। इससे यह अपेक्षा की गई कि विभिन्न राज्य सरकारें इसे पारित कर लागू करेंगी। मुख्य बात यह है कि सहकारी कानून सहकारिताओं के लोकतांत्रिक स्वरूप को विकसित करने में सहायक हो न कि बाधक और समस्त शक्ति का केन्द्र "पंजीयक" के स्थान पर "सदस्यों" का हो।

स्वायत्तता लाने हेतु विभिन्न राज्यों में उठाए गए कदम

आन्ध्र प्रदेश ने इस दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाकर "आन्ध्र प्रदेश म्यूचअली एडेड सहकारी कानून 1995" पारित किया है। इसके अंतर्गत पंजीयक को मात्र एक रबर स्टेम्प बना दिया गया है एवं सहकारिताओं को सरकारीकरण से मुक्त रखा गया है तथा राज्य सरकार की हिस्सा पूंजी पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगा दिया गया। इस कानून के अंतर्गत नगर संस्थाएं कार्य करना चाहती हैं तो उन्हें अपने आर्थिक साधन स्वयं जुटाने होंगे। इस कानून के तहत अगर कोई वर्तमान में कार्यरत सहकारी समिति आना चाहती है और पंजीयक के नियंत्रण से बाहर रहकर संगठन के रूप में कार्य करना चाहती है तो उसे राज्य सरकार से मिले अंशदान को वापस करना होगा।

राजस्थान राज्य में भी वर्तमान सहकारी कानून 1965 की धारा 139 का उपयोग कर दो अध्यादेशों द्वारा समान्तर अधिनियम के माध्यम से आत्म-निर्भर सहकारिताओं को 11 अक्टूबर 1995 से उन्मुक्तता प्रदान की। राज्य सरकार द्वारा जिन सहकारी समितियों में हिस्सा राशि, ऋण या ऋण पर गारण्टी नहीं है, उन्हें अपने कार्यकलापों के लिए स्वायत्तता दी गई। इस प्रकार की उन्मुक्त सहकारी समितियों में मुख्य है नागरिक सहकारी बैंक, प्राथमिक सहकारी भण्डार, क्रय-विक्रय सहकारी समितियां, बचत, एवं साख सहकारी समितियां, प्राथमिक दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियां, कृषि माल संचार इकाइयां, बुनकर, औद्योगिक, वन श्रमिक, श्रमिक ठेका, भेड़ और ऊन उत्पादक, महिला सहकारी समितियां, तिलहन उत्पादक सहकारी समितियां तथा इसी प्रकार की अन्य सहकारी समितियां सम्मिलित हैं जिनमें राजकीय विनियोजन नहीं है पर राज्य सहकारी बैंक, राज्य सहकारी भूमि विकास बैंक, केन्द्रीय सहकारी बैंक, प्राथमिक सहकारी भूमि विकास बैंक; ग्राम सेवा सहकारी समितियां तथा ग्रामीण क्षेत्र में कार्यरत लेम्पस को नये प्रावधानों के अंतर्गत स्वायत्तता की श्रेणी में नहीं रखा गया है और इन सब पर वर्तमान सहकारी कानून की समस्त धाराओं का प्रभाव यथाविद कायम रहेगा।

राज्यों में इस प्रकार से उन्मुक्त सहकारी समितियां अपना संचालन सदस्यों द्वारा चुने हुए संचालक मण्डल द्वारा करेंगी तथा ऐसी उन्मुक्तता प्राप्त सहकारी समितियों में पंजीयक सहकारी समितियों का किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं रहेगा। स्वायत्तता में आने वाली सहकारी समितियां अपना अंकेक्षण, और चुनाव स्वयं कराएंगी एवं व्यापारिक स्थिति को सुदृढ़ करने के लिए आर्थिक साधन स्वयं जुटाएंगी। स्वायत्तता की परिधि में आने वाली सहकारी समितियां अपने उप-नियमों में संशोधन करने, एक समिति को दूसरी समिति में मिलाने या विभाजन करने, समिति की सदस्यता प्राप्त करने, संस्थाओं में कर्मचारियों की नियुक्ति और उन पर नियंत्रण रखने, सहयोगी सदस्य बनाने, ऋण वितरण तथा अन्य प्रदेशों में भी व्यवसाय करने की स्वतंत्रता समितियों को दी गई है। अब उन्मुक्त समितियों में यदि हानि होती है तो उसकी जिम्मेदारी संचालक मण्डल पर होगी तथा सदस्यों को वहन करनी होगी और इसका निर्धारण भी समिति द्वारा ही किया जाएगा। इस तरह की सहकारी समितियों में राज्य सरकार द्वारा प्रशासक नहीं लगाया जा सकेगा।

स्वायत्तता की श्रेणी में आने वाली समितियां उप-नियमों के साथ पंजीयन के लिए आवेदन करेंगी तथा पंजीयन अधिकतम 60 दिवस की अवधि में कर दिया जाएगा। वर्तमान में कार्यरत सहकारी समितियों को स्वायत्त होने के लिए आम सभा में दो तिहाई बहुमत से एक प्रस्ताव पारित करना होगा। ऐसी अपेक्षा है कि स्वायत्तता-प्राप्त सहकारी समितियां अपने सदस्यों को अधिक सक्रियता की ओर ले जा सकेंगी और समिति को आत्मनिर्भर बनाकर स्वचालित संगठन का स्वरूप प्रदान कर सकेंगी।

आन्ध्र प्रदेश और राजस्थान में समान्तर अधिनियम के माध्यम से सहकारिताओं को जो स्वायत्तता प्रदान की गई है, उसी को ध्यान में रखते हुए बिहार, मध्यप्रदेश, तमिलनाडु, जम्मू कश्मीर, दिल्ली आदि राज्यों ने भी स्वायत्तता संबंधी अधिनियम पारित कर सहकारी संस्थाओं को शासकीय नियंत्रण से निकालने का प्रयास कर सहकारिताओं को आर्थिक विकास में सदस्यों की भागीदारी सुनिश्चित करने हेतु कदम उठाए हैं। इस प्रकार के प्रयासों को सहकारिता के क्षेत्र में आशा एवं विश्वास के साथ देखा जा रहा है और यह भी आशा बंधी है कि समस्त राज्य के सहकारी विधानों में स्वायत्तता को लक्ष्य रखकर ब्रह्मप्रकाश कमेटी द्वारा आदर्श सहकारी अधिनियम के अनुरूप परिवर्तन की प्रक्रिया प्रारम्भ होगी।

सहकारी कानून में आमूल परिवर्तन के साथ स्वायत्तता को प्रतिस्थापित कर शासन को मित्र, दार्शनिक और मार्गदर्शक की भूमिका निभाने पर ही सहकारी आन्दोलन जन-आन्दोलन का स्वरूप ले सकेगा और सदस्यों के स्वयं एवं सामूहिक प्रयासों द्वारा सामाजिक और आर्थिक विकास में सहकारिता की सार्थक भूमिका विकसित हो सकेगी और वर्तमान में दृष्टिगत सहकारिता की विसंगतियां दूर हो सकेंगी। जिस प्रकार स्वतंत्रता प्रत्येक व्यक्ति का जन्म सिद्ध अधिकार है, ठीक उसी प्रकार "स्वायत्तता" सहकारिता की अपरिहार्यता है। ❑

(द्वितीय आवरण पृष्ठ से जारी)

विकेन्द्रीकरण और विशेषकर ग्राम–सभा की कुशल कार्यप्रणाली पर जोर देता रहा है। ग्रामीण विकास मंत्री देश के सभी सरपंचों को पत्र लिख रहे हैं कि वे ग्राम सभाओं की नियमित बैठक बुलायें और लोगों में ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के प्रति जागरूकता बढ़ाने तथा विभिन्न योजनाओं की प्रगति की निगरानी और समीक्षा करने के लिए ग्राम सभाओं को एक प्रभावी मंच के रूप में विकसित करें।

मंत्रालय इस बात के प्रति चिंतित है कि कार्यक्रमों के कार्यान्वयन में पूर्ण पारदर्शिता होनी चाहिए। यह इस मंत्रालय का विशिष्ट निर्देश है कि विभिन्न कार्यक्रमों के अंतर्गत लाभार्थियों का चयन ग्राम सभाओं द्वारा किया जाना चाहिए। पारदर्शिता केवल लाभार्थियों के चयन तक ही सीमित नहीं होनी चाहिए। किसी भी निर्माण कार्य के खर्च के ब्यौरे आम जनता के लिए उपलब्ध होने चाहिए। कार्यान्वयन प्रक्रिया में और अधिक पारदर्शिता लाने के लिए ग्रामीण विकास मंत्री श्री एम. वेंकैया नायडू ने सभी मुख्यमंत्रियों को पत्र लिखकर भी अनुरोध किया है कि वे जिला, ब्लाक और ग्राम पंचायत स्तर पर सूचना बोर्ड लगवाने की व्यवस्था करें जिनमें ग्रामीण विकास मंत्रालय के विभिन्न कार्यक्रमों के अंतर्गत विभिन्न धनराशि और शुरू किये जा रहे कार्यों का उल्लेख हो। ग्रामीण विकास मंत्री ने संकेत दिया है कि ये सूचना बोर्ड 15 मई, 2001 तक लगा दिये जाने चाहिए।

लोगों की भागीदारी बढ़ाने के उद्देश्य से ग्रामीण विकास मंत्री ने सुझाव दिया है कि ग्राम पंचायतों द्वारा शुरू किए कार्यों की ग्राम सभाओं में सामाजिक लेखा परीक्षा की जानी चाहिए। उन्होंने सभी मुख्यमंत्रियों को यह भी सुझाव दिया है कि वे ये सुनिश्चित करें कि ग्राम सभाओं की वर्ष में कम से कम चार बैठकें हों जो प्रमुख रूप से 26 जनवरी, 1 मई, 15 अगस्त तथा 2 अक्तूबर को होनी चाहिए। यदि ग्राम सभा का कोई सदस्य किसी भी निर्माण कार्य के बारे में आकलन की प्रति चाहता है तो यह प्रति राज्य सरकार द्वारा निर्धारित नाममात्र की फीस अदा करने पर संबंधित कर्मचारी द्वारा जारी की जानी चाहिए। ग्राम पंचायत के कार्यालय में रिकार्डों को निरीक्षण हेतु उपलब्ध कराया जाना चाहिए।

लोंगों की भागीदारी को ग्राम सभा की सक्रिय भागीदारी के जरिए बढ़ाया जाना चाहिए। ग्राम सभा स्थानीय स्तर पर कार्यों की योजना बनाए और जवाहर ग्राम समृद्धि योजना, सुनिश्चित रोजगार योजना, ग्रामीण आवास के मामले में कार्यों का कार्यान्वयन लोगों द्वारा स्वयं किया जाए। वाटरशेड विकास में लोगों की भागीदारी और विभिन्न परिसम्पत्तियों के रख–रखाव का कार्य पंचायती राज संस्थाओं को सौंप दिया जाना चाहिए।

यह सामान्य बात है कि सभी सरकारी कार्यों की लेखा–परीक्षा होती है। तथापि, लेखा परीक्षा सरकारी तंत्र द्वारा की जाती है। ग्रामीण विकास मंत्रालय चाहता है कि लेखा परीक्षा प्रक्रिया में लोगों को शामिल किया जाए। इसलिए मंत्रालय चाहेगा कि सामाजिक लेखा परीक्षा ग्राम सभा की कार्यप्रणाली का हिस्सा हो। मंत्रालय अलग से दिशा–निर्देश जारी कर रहा है कि ग्राम सभा, सामाजिक लेखा परीक्षा का रिकार्ड रखे जो ग्रामीण विकास मंत्रालय के अधिकारियों सहित दौरा करने वाले अधिकारियों द्वारा जांच किए जाने के लिए उपलब्ध होने चाहिए। ❑

आर एन. / 708 / 57
डाक–तार पंजीकरण संख्या :डी (डी एल) 12057 / 2001
आई.एस.एन.एन. 0971–8451
पूर्व भुगतान के बिना के अधीन डी.पी.एस.ओ. दिल्ली में डाक मे
डालने की अनुमति (लाइसेंस) : यू (डी एन)–55

R.N./7
P&T Regd. No. D (DL) 12057/20
ISSN 0971-84
Licenced under U (DN)-
to Post without pre-payment of DPSO, Delhi-

श्रीमती सुरिन्द्र कौर, निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली –110001 द्वारा प्रकाशित और मुद्रित।
मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स प्रा. लि., डब्ल्यू –30 ओखला इंडस्ट्रियल एरिया–प्प, नई दिल्ली–20 संपादक: बलदेव सिंह